अध्याय–प्रथम

मैत्रेयीपुष्पा का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

अध्याय–1

मैत्रेयीपुष्पा का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

(क) जीवनवृत्त

1.1 भूमिका

उपन्यास आधुनिक युग की सर्वाधिक लोक प्रिय विधा है। मानव चरित्रों पर प्रकाश डालना और उसके रहस्य को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्व है। स्त्री अनंत काल से समाज की शक्ति और साहित्य का मुख्य केन्द्र रही है। आज समाज के बदलते मानदंड, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अवस्थाओं का विकास तथा नवीन आदर्शो की स्थापना में स्त्री की महत्वपूर्ण भूमिका है। वर्तमान समाज के बदलते जीवन मूल्यों में जहाँ पुरूष अपने व्यक्तिगत विकास के लिए प्रयत्नशील है, वही स्त्री अपनी व्यक्तिगत आजादी एवं पहचान को सुरक्षित रखना चाहती है। समाज, साहित्य और संवेदना, ये तीन तत्व इस प्रकार से परस्पर गुँथे हुए हैं कि इन तीनों का सामंजस्य उत्तम साहित्य की रचना करने, मनुष्य में संवेदना जाग्रत करने तथा आदर्श कल्याणकारी समाज की स्थापना करने में आधारित सिद्ध होता है। जिस प्रकार समाज और साहित्य को अलग नहीं किया जा सकता, उसी प्रकार साहित्य को भी संवेदना से पृथक करना संभव नहीं हैं। यह साहित्यकार की संवेदना ही होती है जो उसे समाज और सामाजिक घटनाओं व समस्याओं के प्रति संवेदनशील बनाकर उन्हें अपनी कलम के माध्यम से शब्दबद्ध करने के लिए प्रेरित करती है और जब साहित्यकार की यह संवेदना शब्दों के माध्यम से पुस्तक का आकार ग्रहण कर जन–सामान्य के बीच पहुँचती है तो पाठक को भी अपने आवेग में बहाकर ले जाती है। इस प्रकार साहित्यकार सामाजिक सरोकारों के प्रति अपनी संवेदनाओं के माध्यम से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से श्रेष्ठ समाज के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। साहित्यकार का उद्देश्य, संदेश और विजन उसकी रचना के माध्यम से ही झलकता है। सदियों से साहित्यकार समाज के प्रति अपने इस दायित्व को बखूबी निभाता आया है। यह प्रतिस्पर्धा भले ही लेखक की श्रेष्ठ साहित्य की रचना हेतु अपने आप से हो या अन्य साहित्यकारों से, लेकिन इस प्रतिस्पर्धा के परिणाम

सदैव लेखन (रचना) के हित में, पाठकों (जन सामान्य) के हित में तथा पाठकों के माध्यम से पूरे समाज के हित में हो, ऐसी अपेक्षा सदैव साहित्यकार से की जाती है। यह तटस्थता–भाव ही लेखक को सामाजिक सरोकारों के प्रति निष्पक्षता बरतने और रचना व पाठकों के साथ न्याय करने में सहायक सिद्ध होता है। निश्चित रूप से समकालीन साहित्यकार इसी तटस्थता–भाव के साथ समसामयिक विषयों को आधार बनाकर साहित्य की रचना कर रहे हैं। नारी–जीवन, दलित वर्ग, साम्प्रदायिकता, बाजारवाद, राजनीति तथा भूमण्डलीकरण इत्यादि विषयों को प्रमुख रूप से केन्द्र में रखकर समकालीन साहित्य की रचना की जा रही है। स्वाभाविक संवेदनशीलता के कारण लेखक इन सामाजिक समस्याओं को अपने साहित्य में अभिव्यक्ति कर समाज में चेतना जाग्रत करने और इन समस्याओं के उन्मूलन में प्रभावी योगदान दे रहा है।

समकालीन रचनाकारों में मैत्रेयी पुष्पा ने भी स्त्री तथा स्त्री–जीवन को आधार बनाकर साहित्य रचना की और बहुत कम समय में विशेष ख्याति भी प्राप्त की। मात्र दो दशकों में उन्होंने 20 रचनाएँ हिन्दी साहित्य–जगत् को देने का उल्लेखनीय कार्य किया है। निश्चित रूप से यह उनकी संवेदनशीलता, अनुभवों का संग्रह तथा लिखने की ललक ही है, जिससे उन्होंने इतने कम समय में विशेष ख्याति अर्जित की है। इनका साहित्य मूलरूप से स्त्री जीवन की समस्याओं और संघर्ष पर केन्द्रित है और इसमें स्त्री–चेतना के स्वर मुख्य रूप से उभर कर सामने आते हैं। लेकिन यह स्त्री–चेतना किसी नारेबाजी या आन्दोलन का परिणाम नहीं है अपितु यह चेतना गाँव की सीधी–साधी अनपढ़, कम–पढ़ी लिखी तथा शिक्षित शहरी महिला में 'जीवन' के अनावश्यक बंधनों की कसावट के परिणामस्वरूप उत्पन्न मुक्ति की छटपटाहट से अंकुरित होती है। मैत्रेयी पुष्पा के साहित्य में अत्यंत सहज–सरल भाषा में जीवन के स्वाभाविक क्रियाकलापों के साथ जीवन जीती हुई स्त्री के लिए मुक्ति की आकांक्षा सर्वत्र परिलक्षित होती है। उनका कथा साहित्य स्त्री विषयक संवेदना के विविध आयामों से भरपूर है। उन्होंने कथा साहित्य के स्त्री पात्रों को ग्रामीण परिवेश में ढूँढा और उनके सुख–दुःख, संघर्ष, संवेदनाओं को पाठक तक ले गई। इनकी कथा भूमि ही नहीं, उनकी अनुभव और प्रेरणा भूमि भी गाँव ही है। यही ये विशेषताएँ हैं जिन्होंने मुझे मैत्रेयी पुष्पा के कथा–साहित्य पर

शोध करने के लिए प्रेरित किया।

मैत्रेयी पुष्पा के साहित्य संबंधी विचारों को देखने से यह स्पष्ट है कि जिस सुचिंतित गद्य के द्वारा मैत्रेयी पुष्पा ने स्त्रियों में जागृति की लहर उत्पन्न की, वैसा कोई अन्य साहित्यकार नहीं कर सका है। मैत्रेयी के व्यक्तित्व और कृतित्व की इस लहर का परिणाम यह हो रहा है कि आज स्त्रियों–युवतियों में विशेष रूप से धर्म, नैतिकता, नियमों, पितृसत्ता के व्यवस्थापक विधि–विधानों के स्त्री विरोधी प्रावधानों पर नई रोशनी की जागृति से बदले हुए नजरिए से सोचने, समझने की शुरूआत हो चुकी है। समय के पार जाने की यही सामर्थ्य मैत्रेयी को युगचिंतक और विचारक रचनाकार की श्रेणी में खड़ा करती है। जिस तरह से उनकी नारी विमर्श की परिभाषा अत्यन्त सारगर्भित सरल और यथावत है, उसी तरह नैतिकता पर उनका चितंन सर्वथा नई अवधारणा का रोपण करता है।

मनुष्य के व्यक्तित्व पर उस परिवेश और उन परिस्थितियों का प्रभाव पड़ता है। जिसमें उसका व्यक्तित्व निर्मित होता है। व्यक्तित्व जीवन के असीमित तंतुओं का संगुफन होता है। व्यक्ति की रूचियाँ, संस्कार, विवेक, लगन और प्रतिभा किसी एक निश्चित लक्ष्य का चुनाव करके उसी की सिद्धि मे गतिशील हो, उसके व्यक्तित्व की यही दृढ़ता उसके विचारों, संस्कारों, वातावरण एवं वाह्यच रूप अनुभव को प्रभावित करती है। यही दृढ़ता उसके लक्ष्य में सहायक होती है और उसके जीवन की उपलब्धियों को सफलता तथा सार्थकता देती है। मैत्रेयी जी को बचपन से मिले अनुभवों ने जीवन को देखने परखने की क्षमता दी और संवेदनशील प्रतिभा ने उसे साहित्य के निष्कर्ष पर कस कर परिमार्जित किया। इस प्रक्रिया को गतिमान करने में अंतःप्रेरणाएँ और बहिर्प्रेरणाएँ दोनों ही सहायक होती हैं।

1.2 जीवन परिचय

विख्यात लेखिका मैत्रेयी पुष्पा का जन्म 30 नवम्बर 1944 ई0 को उत्तर प्रदेश में अलीगढ़ जिले के सिर्कुरा गांव में हुआ। ब्राह्मण कुल में जन्मी मैत्रेयी भिन्न–भिन्न वर्ग–समुदायों के पारिवारिक आश्रय में पलकर बड़ी हुई। इनका आरम्भिक जीवन झांसी के खिल्ली गाँव में बीता। भारतीय परिवारों में पुत्र जन्म को अधिक महत्व दिया जाता है। वह आगे चलकर वंश चलाता है। मैत्रेयी के जन्म से न तो किसी को अधिक खुशी हुई और न ही गम। बेटी के जन्म के साथ अनेक धारणाएँ हमारी

संस्कृति में मानी गई है जैसे 'कस्तूरी कुण्डल बसै' में मैत्रेयी ने कहा है कि ''लड़कियाँ धान का पौधा होती है। समय से पहले ही दूसरी ओर रोप देना अच्छा होता है।''[1]

मैत्रेयी की माँ कस्तूरी आधुनिक विचारों वाली थी। उसने अपनी बेटी को जब जन्म दिया तब खुद को गौरवान्वित महसूस किया। मैत्रेयी के पालन–पोषण में उन्होंने कोई कमी नहीं छोड़ी। मैत्रेयी के जन्म को एक रस्म की तरह माना।

मैत्रेयी पुष्पा की माता कस्तूरी देवी और पिता हीरालाल की एकमात्र संतान रही हैं। अपने जन्म का चित्रण मैत्रेयी पुष्पा 'कस्तूरी कुण्डल बसै' में इस प्रकार करती हैं, ''जन्म से ही घर के हालात सुधरे, घर में अन्न और दूध आने लगा, सारे गाँव में अमन चैन था।''[2] उनका जन्म आजादी से तीन वर्ष पूर्व हुआ था। तब गाँव के ढर्रे में धीरे–धीरे सामाजिक आर्थिक परिवर्तन आने लगा था। पंडित जी ने उनके ग्रह नक्षत्र को देखकर मैत्रेयी नाम सुझाया। यह नाम मैत्रेयी पुष्पा के पिता हीरालाल को भी बहुत पसंद आया था। स्वयं मैत्रेयी ने भी अपने नामकरण की चर्चा 'कस्तूरी कुण्डल बसै' में की है, जहाँ माता–पिता की भावना इस रूप में व्यक्त हुई है–''इसका नाम 'मैत्रेयी' रखते वक्त खुर्जावाले पंडित जी ने क्यों कहा था कि यह ज्ञानवान की कथा, मैत्रेयी पुष्पा कौन थी? ऋषि याज्ञवल्क्य की पत्नी। उन्होंने अपने ऋषि पति से कोई सम्पदा नहीं माँगी। कोई सुख नहीं चाहा, बस ज्ञान माँगा था। उस देवी का नाम मैत्रेयी था, इसका भी नाम मैत्रेयी होगा।''[3]

लेकिन गाँव के लोग यह नाम उच्चरित नहीं कर पा रहे थे। इसलिए पूरा गाँव उन्हें पुष्पा कहकर बुलाता। पुष्पा नाम उनकी दूर की रिश्ते की बुआ का दिया हुआ नाम था। कालांतर में जब उन्होंने साहित्य क्षेत्र में पदार्पण किया तो अपने दोनों नामों को मिलाकर 'मैत्रेयी पुष्पा' नाम से लिखने लगी।

---

1 मैत्रेयी पुष्पा–कस्तूरी कुण्डल बसै, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्कण–2009, पृ0सं0 18

2 वही, पृ0 45

3 डॉ0 किरण पोपकर–मैत्रेयी पुष्पा का कथा साहित्य (स्त्री विमर्श), गौड़ पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, पृ0सं0 59

1.3 पारिवारिक पृष्ठभूमि

मैत्रेयी ने जिनकी कोख से जन्म लिया उस माता का नाम कस्तूरी। अपने माता से मैत्रेयी काफी प्रभावित थी। इसलिए उन्होंने, अपनी आत्मकथा 'कस्तूरी कुण्डल बसै' में कस्तूरी के बारे में सही–सही विचार प्रस्तुत किये हैं। मैत्रेयी पुष्पा की माँ कस्तूरी अत्यंत स्वाभिमानी महिला थी। मैत्रेयी पुष्पा आज जो भी हैं, उसमें माँ कस्तूरी के संस्कार बहुत मायने रखते हैं। स्वाभिमान, उत्साह, प्रेम, संयम, साहस ये गुण उनमें कूट–कूटकर भरे हुए थे। मैत्रेयी पुष्पा की माँ कस्तूरी एक स्वतंत्र विचारों वाली स्त्री जिसका प्रभाव मैत्रेयी के जीवन पर पड़ा और बना रहा।

मैत्रेयी जब मात्र अट्ठारह महीने की थी तब उनके सिर से पिता की छत्रछाया उठ गई। मोतीझला की बीमारी में तड़प–तड़प कर उनकी जीवन लीला समाप्त हुई थी। हीरालाल अत्यंत स्वाभिमानी इंसान थे। उन्होंने अपने जीवन में मूल्यों को महत्व दिया था। अपने पिता के सम्बन्ध में मैत्रेयी 'अपनी बात' में कहती है कि "मेरे पिता जमींदार के विरूद्ध खड़े होकर कोड़ों की मार मारे गये। उनका अपराध था गरीब होकर स्वाभिमान से जीना। वे लगान न देने के कसूरवार थे, सख्त सजा के पात्र थे। ऐसे ही दंडित समूह गाँव कहलाता था या गाँव का दूसरा नाम था दरिद्रता और लाचारी।"[4]

इन शब्दों में मैत्रेयी ने पिता का परिचय अपनी कृति 'गोमा हँसती है' इस कहानी संग्रह में अपने समय के सन्दर्भ में कहते हुए दिया है। पिता आजादी से पहले आजाद आदमी की तरह रहे तो आजाद नागरिक की तरह ही मरे जिसका प्रभाव मैत्रेयी पर पड़ना सुनिश्चित था।

मैत्रेयी का आरंभिक जीवन का परिवेश ग्रामीण समुदाय से सम्बन्धित रहा है जहाँ रूढियाँ, अंधविश्वास आदि परम्परावादी विचारधाराएं प्रभावी होती है। परिवार में पिता हीरालाल के स्नेह की छाया से वंचित, मैत्रेयी पुष्पा का बचपन खेरापतिन दादी के सानिध्य में व्यतीत हुआ। मोतीझला के कारण पिता के असमय निधन के पश्चात घर में केवल तीन सदस्य थे। मैत्रेयी, उनकी माँ कस्तूरी देवी और दादा मेवाराम पैरों से अपाहिज थे, लेकिन मैत्रेयी को उनसे बहुत लाड़–प्यार मिलता रहा।

---

4 मैत्रेयी पुष्पा–कस्तूरी कुंडल बसै, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–2009, पृ0सं0 124

मैत्रेयी पुष्पा को जीवन में उनकी माँ कस्तूरी देवी ने अधिक प्रभावित किया है। वह एक कर्मठ मजबूत इरादों वाली जुझारू स्त्री थी। अकाल विधवा बनी कस्तूरी देवी ने अपने जीवन का ध्येय शिक्षा को बनाया था। वह महत्वाकांक्षी स्त्री थी इसलिए जब देश में स्त्री शिक्षा की लहर आई, तो उन्होंने अपनी एकमात्र विद्यार्जन की इच्छा को पूरी करना चाहा। कस्तूरी देवी के सपने को पूरा करने में उनके ससुर मेवाराम ने भी पूरा सहयोग दिया था। जब मैत्रेयी केवल आठ वर्ष की थी तब उन्हें प्रशिक्षित ग्रामसेविका के रूप में, सरकार की ओर से नौकरी के लिए बुलावा आया। नौकरी के चलते वह मैत्रेयी के लालन–पोषण पर अधिक ध्यान नहीं दे पाई। मैत्रेयी का बचपन माँ के रहते हुए भी माँ की ममता से वंचित रहा। माँ से उन्हें बचपन में घृणा और डर था। अपनी इस भावना को उन्होंने गाँव की खेरापतिन दादी के सामने प्रकट किया था,

''मेरी माँ, माँ नहीं मामाजी है। मैं उनसे डरती हूँ, सो कुछ नहीं कहती।''[5]

उनसे मैत्रेयी पुष्पा का बहुत लगाव था खेरापतिन दादी उनकी सबसे प्रिय भी थी। स्वयं मैत्रेयी पुष्पा ने अपनी आत्मकथा में इसका जिक्र किया है–

''यह दुनिया को आँखे–खोलकर देखने वाली नई बच्ची और वह जमाने की मार खाई चमड़ी पर आड़ी–तिरक्षी लकीरों भरे चेहरे वाली बूढ़ी होती स्त्री, संग मिलकर 'चन्दना' का गीत गाती है।''[6]

उनके साथ गाना–नाचना, चंदना की कथा सुनना उनके रोजमर्रा जीवन की आम बातें थीं। खेरापतिन दादी से मिली लोकगीतों की विरासत का उपयोग आगे चलकर मैत्रेयी पुष्पा की रचनाओं का महत्वपूर्ण अंग बना। कस्तूरी देवी यही चाहती थी कि उनकी बेटी मैत्रेयी पढ़–लिखकर स्वावलंबी बने। इसलिए उन्होंने मैत्रेयी पुष्पा को हमेशा अपने आपसे दूर रखा। लेकिन मैत्रेयी पुष्पा पढ़–लिखकर भी नौकरी नहीं करना चाहती थी। क्योंकि उन्होंने देखा था कि माँ स्वावलंबी बनकर भी पुरुष सत्ता से मुक्त नहीं हो पाई है।

---

5 मैत्रेयी पुष्पा–कस्तूरी कुंडल बसै, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–2009, पृ0सं0 135

6 मैत्रेयी पुष्पा–कस्तूरी कुंडल बसै, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–2009, पृ0सं0 35

1.4 शिक्षा

शिक्षा का महत्व जीवन में अनन्य साधारण होता है। शिक्षा को तीसरी आँख कहा गया है। इन नेत्रों से हम आंतरिक एवं बाहरी दुनिया को देख सकते हैं। नयी सोच, नयी विचारधारा स्थापित कर सकते हैं। अनेक लोगों के विचारों के माध्यम से आँखों से पढ़ सकते हैं। मैत्रेयी पुष्पा के जीवन में भी शिक्षा का महत्वपूर्ण योगदान रहा, जो उनके साहित्य में झलकता है।

मैत्रेयी पुष्पा की आरम्भिक शिक्षा जिला झाँसी के खिल्ली गाँव में हुई। मैत्रेयी का पढ़ने में अधिकतर मन नहीं लगता। माँ कस्तूरी हर बार उसे शिक्षा का महत्व समझाती और उसे स्कूल भेजती। प्रारंभिक शिक्षा लेते समय कठिनाईयों के साथ समय बीतता गया। इसकी सबसे बड़ी वजह यह थी कि माँ महिला मंगल में नौकरी करती थी और पढ़ाई के लिए उसे खिल्ली गाँव में ही रहना पड़ता था। माँ के पास न होने के कारण उसे असुरक्षित लगता वह हॉस्टल में नहीं खेरापतिन के घर रहती थी। शिक्षा के प्रारम्भिक पड़ाव में मैत्रेयी 'कन्या संस्कृत विद्यालय' से शिक्षा ग्रहण की। उनकी माँ कस्तूरी देवी को बहुत अभिमान था उन्होंने अपनी बेटी को संस्कृत विद्यालय में प्रवेश दिलाया। उनकी भावना इस रूप में व्यक्त हुई है, "बाप होते तो देखते, बेटी ऋषि दयानंद के परिवार में ज्ञान हासिल करने जा रही है। देखते कि जिस गाँव में गोरों के कोड़ों की आवाज गूंजती थी, वहाँ विद्या ने पाँव पसारे हैं।"[7]

कन्या संस्कृति विद्यालय में रहकर उन्होंने अपने अध्ययन कार्य को आगे बढ़ाया। मैत्रेयी पुष्पा को वहाँ का वातावरण और नियम खास पसंद नहीं आया। कारण, एक तो वहाँ के क्रिया कलापों में रचनात्मकता नहीं थी। दूसरी "गुरुकुल के वातावरण में रोज–बरोज होने वाले यौन संबंधों के हादसों भी उसकी स्मृति को आच्छन्न किए हुए थे तभी से वह यह भी जानती है कि ऐसे संबंधों के भंडाफोड़ के बाद सारा दंड स्त्री को ही दिया जाता है, वह स्वयं भी इन घटनाओं के बीच एक छोटे–मोटे संघर्ष की अगुवाई भी कर चुकी थी।"[8] संस्कृत विद्यालय के वातावरण तथा वहाँ की स्थितियों का उन्होंने 'चाक' उपन्यास की नायिका सारंग के माध्यम से

---

7 राजेन्द्र यादव (सम्पा0)–हंस, जून 2007, पृ0सं0 37

8 मैत्रेयी पुष्पा– चाक, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–2004, 2013, पृ0सं0 88–92

चित्रित किया है। वहाँ से मैत्रेयी आगे की पढ़ाई के लिए डी0वी0 इण्टर कॉलेज में झांसी आई। तब वह वहाँ कक्षा में एक मात्र छात्रा थी बाकी सब छात्र। जिसका वर्णन उन्होंने ''अब फूल नहीं खिलते'' कहानी की नायिका के माध्यम से चित्रित किया है। लेकिन इसके बावजूद उन्होंने बड़े आत्मविश्वास के साथ बारहवीं की परीक्षा उत्तीर्ण की। यातायात के साधनों के अभाव में उन्हें रोज दस किलोमीटर का रास्ता साईकिल से नापना पड़ता था। जब वह कॉलेज में आई तो वहाँ के वातावरण में अपने आपको ढालने में थोड़ा समय लगा। लेकिन हार मानना उन्होंने कभी सीखा ही नहीं था, अपनी अलग पहचान बनाते हुए तथा कालेज की तथाकथित उच्चवर्गीय लड़कियों पर अपना दबदबा बनाते हुए उन्होंने 'दर्शनशास्त्र' और 'मनोविज्ञान' विषय में बी0ए0 की उपाधि के बाद मैत्रेयी ने बुंदेलखण्ड कालेज झांसी से हिन्दी साहित्य में एम0ए0 किया। मैत्रेयी अपने महाविद्यालयीन जीवन में कुछ न कुछ लिखा करती थी। उनकी अंग्रेजी लिखावट अच्छी थी।

1.5 वैवाहिक जीवन एवं जीवन दर्शन

बचपन से असुरक्षित माहौल में पली–बढ़ी मैत्रेयी सुरक्षित वातारण में रहना चाहती है तथा जीवन में स्थायित्व चाहती है। इसी उद्‌देश्य से वह बी0ए0 में पढ़ते समय माँ से शादी की अपील करती हैं। शादी की बात सुनकर माँ कस्तूरी के सारे संकल्प, सारे सपने टूट जाते हैं। वह बेटी को शिक्षित, स्वावलंबी बनाना चाहती है। उसे लगता है कि बेटी की परवरिश में वह असफल हो गई है। विवाह का विरोध करती हुई कस्तूरी समझाती है, ''तू मुझे गलत समझ रही है। मेरा मतलब यह नहीं कि विवाह बुरी चीज है... यह औरत के लिए ऐसे बंधन पैदा करता है जो जीवन भर कसे रहते हैं। पति के रहने पर भी और न रहने पर भी। पति की पसंद–नापसंद दोनों औरत पर ही भारी पड़ती है।''[9] कस्तूरी प्रगतिशील विचारधारा करना चाहती है। असल में सब कहीं उसका अपमान हो जाता हैं एक विधवा होने के नाते और अपने नए विचारों के नाते। मैत्रेयी उनकी इकलौती बेटी है। पढ़ी–लिखी होने पर भी दहेज देकर उसकी शादी इंजीनियर अयोध्यासिंह से तय होती है। मैत्रेयी बचपन से ही दहेज के खिलाफ है। दहेज के प्रति उनके स्पष्ट विचार के कारण रिश्ता टूट

---

9 मैत्रेयी पुष्पा, 'कस्तूरी कुंडल बसै' नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–2009 पृ0 64

जाता है। अंत में उन्नीस वर्ष की आयु में डॉक्टर रमेशचंद्र शर्मा से उनका विवाह तय होता है। विवाह के बाद मैत्रेयी अनुगामिनी नहीं सहगामिनी बनकर रहना चाहती है। सतमासी बेटी होने पर मैत्रेयी शक के घेरे में आ जाती है, तब वह सोचती है ''मेरे पति भी अपने वंश और पीढ़ियों के प्रति खुद को 'सत्यानाश' का अपराधी मान रहे हैं। यह क्या हो गया? जो पुरुष स्वयं इस बच्ची का पिता होने में हिचक मान रहा हो, उसे वह पति भी कैसे माने?[10] मैत्रेयी में स्वतंत्रता तथा समानाधिकार के प्रति स्वयं ही सजगता और तार्किकता आ जाती है। उसमें अन्याय का प्रतिकार करने का साहस है। उन्हें बचपन से ऐसा परिवेश मिला जिससे उनके विचार परिपक्व बने इसी कारण पति की सो से वह टूटती नहीं।

विवाह के उपरान्त पति के घर संपन्न परिवार की महिला होने का भाग्य प्राप्त हुआ। मैत्रेयी के पति डॉ0 रमेशचन्द्र शर्मा एक चिकित्सक हैं, जो सन् 1967 में अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान में नौकरी मिलने पर अलीगढ़ से दिल्ली आ गए थे। तभी मैत्रेयी उनके साथ दिल्ली आ गई थी। दिल्ली में ही और बाद में नोएडा में पति के साथ रहते हुए, तीन बेटियों को पालते हुए कुछ अलग बनने या कर गुजरने की चाह उनमें थी। बेटी के जन्म पर दूसरी और तीसरी बेटी को दुर्भाग्य की श्रेणी में रखा गया तो खुद मैत्रेयी ने अपने मन की व्यथा व्यक्त करते हुए कहा था, ''क्रूरता यहाँ भी ऐसी है कि मेरी बच्ची के जन्म का अभिनन्दन कोई बात नही' कहकर किया जा रहा है। यहाँ डरावनी शिष्टता तारी है।''[11] पति डॉ0 रमेशचंद्र की ओर से तीसरी बेटी होने के कारण मानसिक दृष्टि से टूटती हुई मैत्रेयी का हाथ उनकी बेटियाँ नम्रता और मोहिता ने थामा था। निम्नमध्यमवर्ग में जन्मी मैत्रेयी ने जीवन के कटु अवसर देखे थे। शादी के बाद भी समाज परिवार में ऐसे अनेक अवसर आए, फिर भी साहसी मैत्रेयी हिम्मत नहीं हारी इसी कारण आज उनका परिवार सुखी तथा संपन्न है। उन्होंने अपनी तीनों बेटियों को डॉक्टर बनाया है। डॉ0 नम्रता और डॉ0 मोहिता एम्स में कार्यरत है और डॉ0 सुजाता एम्स में रिसर्च का काम करती है। मैत्रेयी के साथ रहते–रहते उनके पति के विचारों में

---

10 मैत्रेयी पुष्पा, 'कस्तूरी कुंडल बसै' नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–2009 पृ0 313

11 मैत्रेयी पुष्पा– 'गुड़िया भीतर', राजकमल पेपर बैक्स, नई दिल्ली, 2002 पृ0 16

परिवर्तन आ गया है। इसी कारण 'गुड़िया भतर गुडिया' कृति पढ़कर वे सबसे ज्यादा खुश हुए।

विवाह से पहले मैत्रेयी अपनी माँ के कठोर नियंत्रण एवं निर्देशन के कारण परेशान रहती थी। विवाह के बाद अपने पति के कठोर नियंत्रण एवं निर्देशन के कारण और ज्यादा परेशान एवं व्यथित रहने लगी। विडंबना यह कि माँ से परेशान होकर तो वे विवाह करके पति के पास चली आई पर पति से परेशान होकर कहाँ जाती?

मैत्रेयी दांपत्य की वास्तविकताओं को उजागर करती हुई लिखती हैं– ''पति के साथ असलियत में पत्नी का वह रोल नहीं, जो फेरों के समय वचनों के रूप में बताया जाता है। वादे होते हैं, सहभागिता और एक दूसरे की इच्छा और जरूरत का सम्मान निभाने के कौल किए जाते हैं। सब झूठ। सब फरेब। असलियत में हमारा रोल पति की खादिमा, दासी और गुलाम होना है।''[12] इसलिए जब उनकी बेटी उन्हें 'राइटिंग' शुरू करने को कहती है। तब मैत्रेयी जवाब देती है, ''बेटा हमें गौर से देख, हमारी जैसी औरतें भूल जाती हैं अपना नाम कुल गोत्र और जाति। यही नहीं, अपनी नस्ल भी भूलने लगते हैं हम.... मैं 'मिसेज शर्मा' के सिवा क्या हूँ, बेटा? तेरे पिता की पत्नी .... न औरत हूँ न मनुष्य, केवल पत्नी। इसी रूप में तेरे पिता के परिवार में शामिल हूँ।''[13] मैत्रेयी भीतर ही भीतर सोचती है– ''धीरे–धीरे मेरे वजूद पर डॉ0 शर्मा की पत्नी हावी होती गई और मैं कमजोर हो गई बबली ... बस तेरे डैडी ही मेरी पहचान...।''[14] मैत्रेयी अपने पति को साथी–सखा के रूप में देखना चाहती हैं। मैत्रेयी ने 'गुड़िया भीतर गुड़िया' में वैवाहिक जीवन की घुटन का सिलसिलेवार और स्वभाविक वर्णन किया है। कहा जा सकता है कि डॉ0 रमेशचन्द्र शर्मा से उनका संबंध एक बेमेल विवाह था, जिसमें पत्नी की विकास–यात्रा में पति का कोई सहयोग नहीं था। मैत्रेयी पीएच0डी0 करना चाहती थी, पर हर संभव तरीके से इसे रोक दिया गया।

---

12 मैत्रेयी पुष्पा– 'गुड़िया भीतर गुड़िया', राजकमल पेपर बैक्स, नई दिल्ली, 2002 पृ0 118
13 मैत्रेयी पुष्पा– 'गुड़िया भीतर गुड़िया', राजकमल पेपर बैक्स, नई दिल्ली, 2002 पृ0 130
14 मैत्रेयी पुष्पा– 'गुड़िया भीतर गुड़िया' राजकमल पेपर बैक्स, नई दिल्ली, 2002, पृ0 130

वह संवेदना और प्यार इन भावनाओं को महत्वूपर्ण मानती हैं। मानसिक रूप सें स्वतंत्र होकर जीना पसंद करती हैं। अपने कर्तव्य के प्रति दक्ष हैं। वह बचपन से ही स्त्री–पुरुष भेद नहीं मानती। पत्नी के नाम पर झूठे उसूलों को ढोना नहीं चाहती समानाधिकार चाहती हैं। वह दूसरी पत्नियों की तरह अपने पति की सेवा नहीं करती। पति के बाहर चले जाने पर वह खुद को आजाद महसूस करती है। मैत्रेयी का एक उपन्यास दांपत्य जीवन की कटुता यानी पति के गुस्से का शिकार हो गया था। पूरा उपन्यास उन्हें दूबारा लिखना पड़ा था। जिससे मैत्रेयी इतनी दुखी हुई कि उनके मन में आता है कि उनके पति का देहांत हो जाए। वे विवाह के संताप से मुक्त होना चाहती थी। मैत्रेयी पुष्पा में जद्दो–जहद करने की क्षमता चाहे जितनी हो, उनके संस्कार इस तरह के नहीं है कि वह अपने वैवाहिक संबंध को अकारण त्याग कर स्वतंत्र जीवन जीने की शुरुआत कर सकें। इसीलिए उनके हृदय से करूण आवाज उठती है अब मेरे स्वतंत्र होने का रास्ता क्या है?

विधवा होने के पीछे स्वतंत्रता का अंर्तनाद है। मैत्रेयी बंधनों से छुटकारा पाकर मनचाहा जीवन जीने की सोचती हैं। जो जीवन उन्होंने युवा अवस्था में बिताया। वैधव्य का अर्थ कुँआरापन है, किसी के मृत्यु के अवसान की कामना है। अन्यथा विधवा होने का चाव किसे हो सकता है। मैत्रेयी ने नित्यजीवन में रूढ़ियों को तोड़ा था– ''एक तो करवाचौथ का व्रत छोड़ चुके थे, दूसरे मैंने कुछ दिन पहले ही बिछिया उतार दिए थे। सुहागचिह्न काँच की चूडियाँ भी रास नहीं आई मुझे।''[15]

धीरे–धीरे डॉक्टर साहब में भी बदलाव आता है और मैत्रेयी को उनकी महानता का सबूत मिलता है। मैत्रेयी ने जब एक के बाद एक तीन बेटियों को जन्म दिया, तो उनकी वही दशा हुई जो आम तौर पर बेटियों की माँ की होती है। गाँव जाने पर उन्हें पता चला कि डॉक्टर साहब की वंश परंपरा को बचाने के लिए उनकी दूसरी शादी की सामूहिक तैयारी चल रही है। पहला विरोध 'कस्तूरी' ने किया और निर्णायकप्रतिवाह डॉक्टर साहब ने। वे मैत्रेयी से कहते हैं, ''यार, तुम्हारा गाँव है यह? मूर्खों का झुंड।''[16] यह एकमात्र मौका था, जब मैत्रेयी को उनके गाँव ने हक्का–बक्का कर दिया। मैत्रेयी जी के विचारों से डॉक्टर साहब में भी बदलाव

---

15 मैत्रेयी पुष्पा– 'गुड़िया भीतर गुड़िया', राजकमल पेपर बैक्स, नई दिल्ली, 2002, पृ0 243

16 मैत्रेयी पुष्पा– 'गुड़िया भीतर गुड़िया', राजकमल पेपर बैक्स, नई दिल्ली, 2002 पृ0 103

आया है। इसका प्रमाण उन्हें मिलता है। जब 'गुडिया भीतर गुड़िया' को पढ़कर डॉक्टर साहब खुश होते हैं।

1.6 साहित्यिक प्रेरणा

लेखन की प्रेरणा आंतरिक ही होती है। मैत्रेयी का साहित्य के प्रति पहले से ही रूझान था। मैत्रेयी की शिक्षा जहाँ पर हुई वह एक साहित्य नगर थी। मैथिलीशरण गुप्त तथा रामकुमार वर्मा जी का साहित्य पढ़ते–पढ़ते उनके समांतर चित्र उनके आँखों के सामने उभरते जाते थे। बचपन में सुभद्राकुमारी चौहान की कविताओं से प्रेरित होती थी। शादी के लगभग 25 साल बाद लिखना शुरू किया।

मैत्रेयी पुष्पा को बचपन से ही कविता उस समय अच्छी लगती थी जब उनके साथ के बच्चे कविता का अर्थ भी नहीं समझते थे। मैत्रेयी पुष्पा से उजैर खाँ की अंतरंग बातचीत में मैत्रेयी जी कहती है– ''कविता के बीच बचपन में ही अंकुरित हुए थे–

आओ हम सब झूला झूलें।
पेंग बढ़ाकर नभ को छू लें।''[17]

तीसरी क्लास से ही यह कविता मैत्रेयी को एक दिशा देने का काम करती रहीं। तब से मैत्रेयी की कविता का जन्म हुआ। युवावस्था तक आते–आते वहुलती–फूलती गई। बचपन में ही शिक्षा का अगला पड़ाव दो साल तक गुरूकुल में बिताना पड़ा। वहाँ साहित्य में अधिक रूचि पैदा हुई। डॉ0 विजय दीक्षित के साथ हुई बातचीत में मैत्रेयी कहती है– ''कविता पढ़ना तीसरी कक्षा से ही अच्छा लगने लगा। मैं चिट्ठियाँ ऐसी लिखती थी कि उधार न पटाने वाले लोग भी माँ को घर बैठे ही खेती के लगान के पैसे दे जाते थे। मुझे प्रेरणा से पहले अपनी कलम के प्रभाव ने आगे बढ़ाया।''[18]

मैत्रेयी पुष्पा एक ऐसी स्त्री है, जिसे समाज ने नहीं उन्होंने अपने आपको बनाया है। साहित्य के क्षेत्र में कहानी तथा उपन्यास के माध्यम से अपनी अलग पहचान बनाई। वे कहती हैं– ''मेरी लेखिका बनने से मेरी शादी का, मेरे पति का

---

17 मैत्रेयी पुष्पा और उजैर खाँ की अंतरंग बातचीत, 24 जून 2006, इंटरनेट
18 डॉ0 विजय दीक्षित सूर्य प्रसाद– 'चाणक्य विचार', पृ0 7

कोई सहयोग नहीं। यह तो मेरे अंदर ही कुछ हुआ होगा।''[19] मैत्रेयी में ये कला बहुत पहले से ही विद्‌यमान थी, उन्होंने पति को शादी के बाद लिखी चिट्‌ठी में लिखा था, ''मैंने तो साथी–सखा ढूँढ़ा था। तुम तो मालिक हो गए।''[20] उन्नीस साल के लेखकीय जीवन में उन्नींस रचना करने वाली मैत्रेयी पुष्पा को लेखन की प्रेरणा उनके बचपन से ही मिली थी। शादी उपरांत पति से विवाद होना, आरोप–प्रत्यारोप में मैत्रेयी जी पूरी तरह से हताश होती हैं। उससे उबरने के लिए नया कुछ करने हेतु लिखने के लिए कृत संकल्प होती हैं।

गाँवों में लड़कियों के लिए स्कूल की व्यवस्था नहीं थी। लड़कों की पढ़ाई हो जाए यही बहुत था। मैत्रेयी पहले से ही लड़कों के स्कूल में पढ़ने के कारण लड़का–लड़की में भेद नहीं मानती। चौदह वर्ष की उम्र में ही मैत्रेयी ने अपने सहपाठी लड़के की कविता से प्रेरित होकर लिखना शुरू किया था। उन्होंने सोचा कि यह लड़का लिख सकता है तो मैं क्यों नहीं लिख सकती। विचार करें तो मैत्रेयी पुष्पा के लेखन कार्य की नींव उनकी माँ कस्तूरी के विचारों से प्रेरित प्रतीत होती हैं कस्तूरी प्रगतिशील विचारधारा की स्त्री थी। उसने पुरुष जाति के विरूद्ध आवाज उठाई। नारी जाति को स्वावलंबी बनाने की बात कहती है। मैत्रेयी ने अपनी माँ के विचारों से प्रभावित होकर नारी को शोषण, संघर्ष से मुक्त करने तथा उसे न्याय देने के लिए स्त्री विमर्श साहित्य लिखना प्रारंभ किया। मैत्रेयी अपनी बेटियों को प्रेरणा स्त्रोत मानती है। बड़ी बेटी नम्रता के कहने पर मैत्रेयी ने पहली कहानी लिखी। 'साप्ताहिक हिंदुस्तान' में छपी कहानी मैत्रेयी को लेखिका बनाने में सहायक हुई। 'धर्मयुग' और 'साप्ताहिक हिंदुस्तान' में कहानी लिखकर अपना लेखन शुरू किया। विविध कहानियों को पढ़कर मन में नई कहानी की उपज होने लगी।

वस्तुतः विचार करें तो नब्बे के दशक की श्रेष्ठ साहित्यकार के रूप में जगविख्यात होने के पीछे बचपन से लेकर कई घटनाएँ उल्लेखनीय हैं। जीवन के कटु प्रसंग हों, चाहे वह बचपन की गुरूकुल व्यवस्था हो। किसी लड़के की प्रेरणा हो, माँ का प्रभाव हो, या अपनी बेटी के कहने पर। परन्तु किसी भी साहित्यकार में लेखन का गुण उपजाऊ होता है। साहित्य सृजन अंतःप्रेरणा से उद्‌भूत होता है।

---

19 मैत्रेयी से दीप अमरीक सिंह की बातचीत–1 जुलाई, 2008, इंटरनेट

20 मैत्रेयी से दीप अमरीक सिंह की बातचीत–1 जुलाई, 2008, इंटरनेट

तीव्र संवेदनशीलता अभिव्यक्त होकर व्यक्ति को सृजनशील बना देती है। कोई अभाव मन में पलता है। जो मन में चुभता है और कल्पना में प्रबल हो जाता है। वही आवेश, वही चुभन मानवीय विचारधारा को रचनात्मक प्रक्रिया में बदल देती है। परिवेश का प्रभाव मन पर पड़ता है और भावों, विचारों की तीव्रता में बदल देती है। परिवेश काप्रभाव मन पर पड़ता है और भावों, विचारों की तीव्रता लेखन के लिए प्रेरणा बन जाती है। मैत्रेयी आरंभ से ही साहित्यकारों के संपर्क में आई। जिन्होंने मैत्रेयी को अप्रत्यक्ष रूप से लेखन करने के लिए प्रवृत्त किया। उन पर महादेवी वर्मा तथा सीमोन दबोउवार के साथ–साथ हिंदी के उपन्यास सम्राट प्रेमचंन्द का भी प्रभाव दिखाई देता है। उनमें आँचलिकता की झलक दिखाई देती है। इसके साथ फणीश्वरनाथ रेणु का प्रभाव भी स्पष्ट दिखाई देता है। उन्होंने प्रेमचंन्द, फणीश्वरनाथ रेणु की परंपरा को बढ़ाया है। मैत्रेयी फणीश्वरनाथ रेणु तथा राजेंद्र यादव को गुरू मानती हैं।

साहित्य में मनुष्य खुद को प्रकट करता है। साहित्य सुंदर होता है। साहित्य में सुंदरता कम सच्चाई ज्यादा होती है। सच कड़वा होता है। सभी को सच स्वीकार करने में डर महसूस होता है। मैत्रेयी बचपन से ही असाधारण लड़की थी। उनकी असामान्यता उनके लेखन में दिखाई देती है। 'विज्ञान भूषण' से हुई मुलाकात में मैत्रेयी कहती हे, ''मैंने हर तरह के खतरे को झेलते हुए लिखा है। विवाहिता होते हुए तनी डोरी पर चलते हुए कलम चलाई है।''[21]

हर क्षेत्र के साथ साहित्य के क्षेत्र में भी स्त्रियों पर हो रहे शोषण को अपने साहित्य के माध्यम से वह उजागर करती हैं। मैत्रेयी जी साहित्य के माध्यम से स्त्रियों की व्यथा, उनके मन में दबी, कुची भावना को उजागर करती हैं। उन्होंने अपने साहित्य में यथार्थ का सजीव चित्रण किया है वह सच्चाई से स्त्री को अवगत कराती है। उनके साहित्य में नारीवाद नारे के रूप में नहीं बल्कि जीवन के स्वाभाविक प्रवाह के रूप में प्रस्फुटित हुआ है। उन्होंने अपने साहित्य का निर्माण परिवारों को उजाड़ने के उद्देश्य से नहीं किया है। वह अपने साहित्य से पर्दे के पीछे छिपी सच्चाई को प्रकाश में लाती हैं। अपने साहित्य के द्वारा पुरूषों की सोच

---

21 मैत्रेयी पुष्पा से साक्ष्य, 'विज्ञान भूषण', 27 मार्च 2007, इंटरनेट

में परिवर्तन करने की आशा करती है। स्त्री को समानाधिकार देना चाहती हैं। वह साहित्य को सफल या असफल होने से सार्थक लेखन को ज्यादा महत्वपूर्ण मानती हैं।

मैत्रेयी सोचा करती है– "न्याय नहीं कर पाऊँगी तो क्यों लिखती हूँ?.... मैं लिखने के लिए नहीं, शायद जीने के लिए लिखने लगी हूँ। तब फिर जो लिखूँगी सच ही लिखूँगी, बेशक जिसे देखकर खुद ही सन्न रह जाऊँ। और सजा भी मिले। सजा इसलिए मिलेगी क्योंकि औरतों की ऐसी छवि बनेगी कि पुरुषों की इज्जत को खतरे..... परिवारों के खम्भे हिल उठेंगे।"[22] मैत्रेयी सच कहने से किसी से डरती नहीं। अपने लेखन से वह उथल–पुथल मचा देती हैं। मैत्रेयी सच कहने से किसी से डरती नहीं अपने लेखन से वह उथल–पुथल मचा देती हैं। मैत्रेयी अपने लेखकीय संकल्पों को उजागर करती हुई कहती हैं– "मैं लिखूँगी, सिकुर्रा की स्त्रियाँ न मीरा हैं न महादेवी, वे हैं चंदना और कलारिन गीत कथाओं की स्त्रियाँ... वे न अदृश्य के आलम्बन रच पाईं न ईश्वर की अदृश्य सत्ता का सहारा लिया। मामूली औरतें मामूली इच्छाओं के लिए कत्ल हुई तो कभी परित्याग मिला।"[23] मैत्रेयी ने अपने लेखन से गाँव की मामूली मगर जबर्दस्त स्त्रियों का चित्रण किया है।

1.7. पुरस्कार एवं सम्मान

मैत्रेयी पुष्पा ने अल्पावधि में ही हिन्दी साहित्य जगत में अद्वितीय स्थान हासिल किया है उन्होंने उपन्यास, कहानी, निबन्ध, आत्मकथा, संस्मरण आदि गद्य की विविध विधाओं में आपार परचम लहराया है, विशेषकर उपन्यास और कहानी–साहित्य में। वह अपने विषय चयन और उसकी अभिव्यक्ति कौशल के कारण अत्यधिक ख्याति प्राप्त साहित्यकारों में से एक है उनके द्वारा चयनित विषय 'स्त्री विमर्श' के नाम से जाना जाता है जिस पर उन्होंने अनेक पुरस्कार भी प्राप्त किये हैं।

1. साहित्य कृति सम्मान (हिन्दी अकादमी द्वारा) 1991 ई0 में
2. कथा पुरस्कार ('फैसला' कहानी पर) 1993 ई0

---

22 मैत्रेयी पुष्पा– 'गुड़िया भीतर गुड़िया', राजकमल पेपर बैक्स, नई दिल्ली, 2002 पृ0 232
23 मैत्रेयी पुष्पा– 'गुड़िया भीतर गुड़िया', राजकमल पेपर बैक्स, नई दिल्ली, 2002 पृ0 241

3. उपन्यास 'इदन्नमम्' को नंजनागुड्डू तिरूमालम्बा पुरस्कार

4. वीर सिंह जू देव पुरस्कार (मध्य प्रदेश साहित्य परिषद्), 1996 ई0

5. साहित्यकार सम्मान (हिन्दी अकादमी द्वारा) 1998 ई0

6. कथाक्रम सम्मान ('इदन्नमम्') पर 2000

7. मंगल प्रसाद पारितोषिक (2006 में)

8. सुधाकृति सम्मान (2009 में)

9. वनमाली सम्मान 2011 में

10. आगरा यूनिवर्सिटी गौरव श्री अवार्ड (2011 में)

11. 'बेतवा बहती रही' को प्रेमचन्द सम्मान', (उ0प्र0 साहित्य संस्थान द्वारा) 1995 में

12. महात्मा गांधी सम्मान 2012 में

13. सरोजिनी नायडू सम्मान 2003 में

14. सार्क लिटरेरी अवार्ड 2001 में

15. 'द हंगर प्रोजेक्ट (पंचायत राज) का अवार्ड

16. अन्य कई पुरस्कारों से सम्मानित।

17. 'फैसला' कहानी पर 'वसुमती की चिट्ठी' नामक टेलीफिल्म का निर्माण।

18. कृतित्व समग्र सम्मान 2018 में।

19. कभी शिखर सम्मान 2021 में

20. राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त साहित्य सम्मान 2021 में।

'आनंद सागर स्मृति कथाक्रम सम्मान' समारोह के अवसर पर अपने संबोधन में मैत्रेयी जी ने इस पुरस्कार पर अपने संबोधन में मैत्रेयी जी ने इस पुरस्कार को मंदा, सारंग, अल्मा जैसी बदनाम स्त्रियों का सम्मान बताया।

जिन्होंने स्त्री जीवन की दारूण सच्चाइयों से रूबरू कराया। उन्होंने यह बात भी जोड़ी कि हजारों साल से पहचान की तलाश में भटक रही स्त्री अब पहचानी जाने लगी हैं, जो सामाजिक बदलाव का शुभ संकेत है।' मैत्रेयी जी प्रेस क्लब ऑफ इंडिया, विमेंस प्रेस कोर, जर्नलिस्ट एसोसिएशन आफ इंडिया व आथर्स गिल्ड ऑफ इंडिया जैसी संस्थाओं की सम्मानीय सदस्या है।

(ख) कृतित्व

1.1 रूचियाँ एवं प्रवृत्तियाँ

मैत्रेयी की रूचि प्राथमिक रूप से ग्रामीण क्षेत्र हैं, जहाँ वे आरम्भ में पली–बढ़ी है। इसी कारण कई समीक्षक उनको मात्र ग्रामीण जीवन की ज्ञाता मानते हैं, जो शहरी जीवन से अनभिज्ञ है। लेकिन उन्होंने 30–32 वर्ष शानदार जीवन जिया है। इसका प्रमाण उनके 'विजन' उपन्यास में मिलता है। इसके बावजूद उन्होंने अपने अन्दर के गाँव को धूमिल नहीं होने दिया।

मैत्रेयी के लेखन के केन्द्र में केवल प्रतिबद्धता और लेखकीय दायित्वबोध है। वे बिना किसी लालच मोह के लिखती जा रही है। यह उनके लेखन की मूल प्रवृत्ति है। सैकड़ों अध्यापकों एक छात्रों के बीच साक्षात्कार देने वाली मैत्रेयी को देखने सुनने वाला शायद ही विश्वास कर पायेगा कि मैत्रेयी व्यक्तिगत जीवन में सीधी–साधी सरल महिला है। सीधी सरल है शायद इसलिए वे बिना लालच के रचना कर पाती है। इस सम्बन्ध में प्रो0 अर्जुन चव्हान कहते हैं, ''मेरे रसोई घर में पत्नी अनीता के साथ मोंठ की सब्जी बनाने की विधि जानना–करना, उसमें अनीता का हाथ बटाना, कभी दिल्ली जाने पर नोएडा में अपने घर भोजन के लिए साग्रह बुलाना, मोमती गेस्ट हाउस में हम दोनों को लेने अपने पति डाक्टर शर्मा साहब को भेजना, दो–दो घंटे प्रतीक्षा करना और घर में अत्यन्त आत्मीयता से खाना खिलाना, मैत्रेयी के सादगीपूर्ण मिजाज का परिचायक मानना होगा।''[24]

मैत्रेयी कुछ अन्य लेखिकाओं की तरह स्त्री–विमर्श के लिए उपन्यास नहीं लिखती। उनके उपन्यासों में स्त्री विमर्श सहज ही आ जाता है। 'चाक' की सारंग भी पुरुषों से विरोध नहीं करती। सारंग का विरोध उस व्यवस्था से है, जो स्त्रियों को गुलाम बनाकर रखती है।

1.2 मैत्रेयी पुष्पा का रचना संसार

आज के दौर में मैत्रेयी पुष्पा एक ऐसी लेखिका प्रमाणित हुई है जिसने प्रेमचंद के समान समय और समाज को ईमानदारी से प्रस्तुत किया। 'इदन्नमम्', झूलानट', 'अल्मा कबूतरी' मैत्रेयी के वे उपन्यास हैं जो न केवल रेणु की याद

---

24 दया दीक्षित (सं0)–मैत्रेयी पुष्पा : तथ्य और सत्य, सामयिक बुक्स, दिल्ली, 2013 पृ0 72

दिलाते हैं बल्कि उन्हें फणीश्वरनाथ रेणु का समर्थ अनुयायी सिद्ध करते हैं। उनका कथा साहित्य स्त्री विषयक संवेदनाओं के विविध आयामों से भरपूर है। अन्य लेखिकाओं से उनका लेखन इसलिए भी भिन्न साबित होता है क्योंकि उन्होंने कथा को शहरी जीवन के ड्राईंग रूम से मुक्त करके गाँव अंचल से जोड़ दिया।

वे उच्चवर्गीय, शहरी वातावरण में पली–बढ़ी शिक्षित नारी जीवन तक सीमित नहीं है। उन्होंने अपनी कथा के, स्त्री पात्रों को ग्रामीण परिवेश में ढूँढा और उनके सुख–दुख, संघर्ष, संवेदनाओं को वह पाठक तक ले जाने में ही नहीं बल्कि उनके दिलो दिमाग में उतारने में भी सफल रही है। विजय बहादुर सिंह लिखते हैं, ‘‘सच तो यह है कि उनकी कथा–भूमि ही नहीं, उनकी अनुभव और प्रेरणाभूमि भी गाँव ही है। पर यह किसान की कथा नहीं है। हाँ, जुझारू किसान–बहुओं की कथा जरूर है। इस रूप में मैत्रेयी प्रेमचन्द की छोड़ी हुयी जमीन पर आती है। वह जमीन जो होरी की पत्नी धनिया के बावजूद स्त्री संवेदना की पहचान की दृष्टि से अब तक परती पड़ी रह गई थी।’’[25] प्रेरणा न मिलने पर उनका यह शौक विकसित नहीं हो पाया। मैत्रेयी पुष्पा ने अपने जीवन में लेखन कार्य को देर से प्रारम्भ किया है, लेकिन उनके द्वारा लिखा कथा साहित्य इतना सशक्त और बेजोड़ है कि पाठक प्रभावित हुए बिना नहीं रह सका। आयु के चालीस साल बाद उन्होंने लेखन कार्य शुरू किया। फिर भी उनकी हर साल एक किताब कम से कम निकलती है। उन्होंने सात कहानी संग्रह, तेरह उपन्यास, एक नाटक, एक कविता संग्रह, एक रिपोर्ताज, पाँच स्त्री विमर्श संबंधी पुस्तकें और अपनी आत्मकथा दो भागों में लिखी। ‘फैसला’ कहानी पर उनकी एक टेलीफिल्म बनी है। जिसका नाम ‘वसुमती की चिट्ठी’ है। मैत्रेयी पुष्पा ने अपनी कृतियों का निर्माण सब भय त्यागकर किया है। उन्होंने आज के युग में जो प्रचलित गलत मान्यताएं हैं, उनके खिलाफ आवाज उठायी है। मैत्रेयी पुष्पा ने कविता लेखन का आरम्भ किया था। उनकी सर्वप्रथम कविता ‘बाड़े में काम करने वाली महिलाओं’ पर आधारित थी। वैवाहिक जीवन की 25 साल की चुप्पी के बाद बेटियों के प्रोत्साहन से मैत्रेयी ने साहित्यिक जीवन में कदम रखा और अनेक रचनाओं की सृष्टि की–

---

25 डॉ0 किरण पोपकर–‘मैत्रेयी पुष्पा का कथा साहित्य : स्त्री विमर्श, पृ0सं0 81

उपन्यास

1. स्मृति दंश, सन् (1990)
2. बेतवा बहती रही, सन् (1994)
3. इदन्नमम, सन् (1995)
4. चाक, सन् (1997)
5. झूलानट, सन् (1999)
6. अल्मा कबूतरी, सन् (2000)
7. अगनपाखी, सन् (2001)
8. विजन, सन् (2002)
9. कहीं ईसुरी फाग, सन् (2004)
10. त्रिया–हठ, सन् (2004–05)
11. गुनाह–बेगुनाह, सन् (2011)
12. फरिश्ते निकले, सन् (2014)
13. नमस्ते समथर (2021)

कहानी संग्रह

1. चिन्हार–(12 कहानियाँ), सन् 1991
2. ललमनियाँ–(10 कहानी), सन् 1996
3. गोमा हँसती है (10 कहानी), सन् 1998
4. छाँह (12 कहानी)
5. पियरी का सपना सन् 2009
6. प्रतिनिधि कहानियाँ
7. समग्र कहानियाँ

स्त्री विमर्श की पुस्तकें

1. खुली खिड़कियाँ (2003)
2. सुनो मालिक सुनो (2006)
3. चर्चा हमारा (2009)
4. तब्दील निगाहें (2012
5. आवाज (2012)

रिपोर्ताज–फाइटर की डायरी, संस्मरण –'वह सफर था कि मुकाम था'
नाटक–मदाक्रान्ता काव्य संग्रह–लकीरें आत्मकथा–2 भागों में है।

1. कस्तूरी कुंडल बसै (2002)
2. गुड़िया भीतर गुड़िया (2008)

कृतित्व के अंतर्गत मैत्रेयी पुष्पा के साहित्य का अध्ययन किया गया है। मैत्रेयी पुष्पा ने अनेक उपन्यास, कहानियाँ, लेख तथा संस्मरण लिखे। आपके उपन्यासों तथा कहानियों का केन्द्रबिन्दु नारी तथा उससे जुड़े प्रश्न ही हैं। महिला उपन्यासकारों पर यह आरोप लगाया जाता है कि उनकी रचनाओं में मात्र तथा ड्राइंगरूमवाली समस्याओं का चित्रण होता है। मैत्रेयी के उपन्यास इस आरोप का खंडन करते हैं।

मैत्रेयी ने अपने उपन्यासों के स्त्री पात्रों में स्त्री की आंतरिक दृढ़ता, जुझारूपन, आत्मविश्वास, दबंगता पर ही बल दिया है। मैत्रेयी पुष्पा के सभी उपन्यास स्त्री चेतना की मुहिम को निस्संदेह आगे बढ़ाते हैं। इनके उपन्यासों में जिस प्रकार ग्रामीण क्षेत्र की स्त्रियों का संघर्षमय जीवन, उनकी व्यथा, परिस्थितियों से टकराने की जुझारू वृत्ति आदि का वर्णन किया गया है, उससे यह स्पष्ट होता है कि स्त्री को अपनी लड़ाई आत्मविश्वास के साथ होना चाहिए, तभी बदलाव आएगा। मैत्रेयी ने जो अनुभव किया उसे लिखा, स्त्री को हर कोने से देखना चाहा इसलिए उनके उपन्यास पहचाने गए। उनके उपन्यास स्त्री हृदय को छू लेते हैं। मैत्रेयी के पात्रों का जुझारूपन उपरी नहीं है। वह मैत्रेयी के चरित्र का वैशिष्ट्य है।

1.3 उपन्यासों का संक्षिप्त वर्णन

स्मृति दंश (1990)

मैत्रेयी ने 'स्मृति दंश' 'बेतवा बहती रही' उपन्यास के माध्यम से उपन्यास साहित्य में प्रवेश किया। यह उपन्यास 1990 में प्रकाशित हुआ। दोनों उपन्यास कथा की दृष्टि से बहुत ही मार्मिक है। डॉ0 गोपाल राय के अनुसार, ''किसी भावुक पाठक की आँखों को अश्रुपूरित कर देने वाले अत्याचार का अंकन किया गया है।''[26] इस सन्दर्भ में मैत्रेयी का कथन है, ''विधवा समस्या पर लिखने का कारण यही था

---

26 मैत्रेयी पुष्पा–शोध कर्त्री की पुष्पा जी से निजी वार्ता

कि मैंने अपने आस–पास विधवाओं को देखा था, उनकी यातनाओं को करीब से जाना था। मेरी माँ भी विधवा थी। इसलिए मेरी समक्ष में नहीं आ रहा था कि विधवाओं को कौन सी दिशा दी जाए। वह विधवा जो जन्म भर गुलाम बनने के लिए अभिशप्त है। माँ–बाप, भाई, देवर, देवरानी, जेठ–जेठानी आदि के लिए मर सकती है या वृंदावन में जा सकती है इसलिए मेरे दिमाग में सबसे प्रथम विधवा कहानी आई। मैंने कथा तो लिखी लेकिन दिशा देना भूल गई।''[27]

'स्मृतिदंश' एक विधवा स्त्री की दुःख–पीड़ा भरी अत्यन्त त्रासद कथा है। विधवा जीवन की विडंबना और नारकीयता का सहज चित्रण है।

बेतवा बहती रही (सन् 1994)

मैत्रेयी का यह उपन्यास उनके अन्य उपन्यासों से भिन्न है। इसमें लेखिका ने उर्वशी से सैकड़ों ऐसी उर्वशियों की व्यथा बताई हैं, जो प्रेम, वासना, घृणा को सहते–सहते ही मिट जाती है। अब भी हमारे देश में शिक्षित तथा अशिक्षित महिलाएँ उर्वशी जैसा जीवन बिताने को मजबूर है और न मालूम कबतक रहेंगी।

'बेतवा बहती रही' की कथा के केंन्द्र में उर्वशी है। उर्वशी के परिवार में विपन्नता व्यप्त है। घर में उर्वशी और उसका भाई अंकित माता, पिता के साथ रहते हैं। पिता के पास नाममात्र जमीन थी। कड़ी मेहनत करके किसी तरह जीवन बिता रहे थे। उर्वशी नाम से ही नहीं रूप–सौंदर्य से भी उर्वशी थी। उर्वशी का सौंदर्य ही उसके लिए अभिशाप बन जाता है। गरीबी के कारण उर्वशी को सामान्य जीवन नहीं जीने दिया। उर्वशी का बड़ा भाई अजीत अपनी नौकरी के लिए माँ के जेवर तक बेच देता है। पर बहन का विवाह किसी अच्छे घर में करके उस पर रूपया खर्च करना नहीं चाहता। बहन की जिम्मेदारी से मुक्त होने के लिए वह उसे दहेजू वर से व्याहना चाहता है। उर्वशी की सहेली मीरा के नाना–नानी उर्वशी को अपनी बेटी समान ही मानते हैं। नाना स्वयं जाकर सिरसावाले शत्रुजीत के छोटे भाई सर्वदमन से उर्वशी का रिश्ता पक्का कर आते हैं। उर्वशी के विवाह का खर्च भी उठाते हैं सर्वदमन के परिवार में उर्वशी को बहुत प्यार मिलता है। उसे एक बेटा होता है।

27 अरविन्द जैन–हंस, जनवरी 1997, पृ0सं0 67

देवेश। लेकिन दुर्भाग्य यहाँ भी उसका पीछा नहीं छोड़ता। दुर्घटना में उर्वशी के पति की मौत हो जाती है।

पति की मौत के बाद बहन का कभी ख्याल न करने वाला भाई बार–बार उसके घर आने लगा। उसकी नजर उर्वशी की संपत्ति पर है इसलिए वह उर्वशी से मायके रहने की जिद्द करता है। उर्वशी के न मानने पर भाभी द्वारा पिता समान जेठ पर कीचड़ उछाला जाता है। भाई अजीत उसे जबर्दस्ती मायके लाता है, वह भी जेठ पर कीचड़ उछाला जाता है। भाई अजीत उसे जबर्दस्ती मायके लाता है।, वह भी जेठ पर गलत इल्जाम लगाता है। पिता समान जेठ को अपमान से बचाने के लिए उर्वशी अपनी जिंदगी दाँव पर लगा देती है। भाई के कहने से मीरा के पिताजी से शादी करने को तैयार होती है। सबको सुखी देखने के लिए स्चयं बलिदान करती है। जीवन भर अपने बेटे के लिए तरसती है। भाई ने दस बीघा खेत के बदले पिता की उम्र के दुराचारी बरजोर को बेच दिया। भाई के आगे उर्वशी कुछ बोल न सकी। उर्वशी उसी दिन समाप्त हो गई जब उसे अपनी इच्छा के खिलाफ मीरा के पिता से विवाह करना पड़ा। वह जिंदा लाश की तरह जीवन जीती रही।

'बेतवा बहती रही' की कथा यानी उर्वशी के बहाने एक गरीब, साधारण लड़की की कथा है। गरीबी से बचने के लिए अपने भाई द्वारा अपने बालसखी के पिता की दूसरी पत्नी बनाए जाने की कहानी और वहाँ भी अपनी प्रभुता सिद्ध करने के एवज में धीमा जहर दिलवाकर मारे जाने की करूण कथा। उर्वशी के माध्यम से मैत्रेयी यह दिखाया चाहती हैं कि उर्वशी जैसी अनेक स्त्रियाँ विरोध करने का साहस नहीं कर पाती और हिम्मत हार जाती हैं। इनकी मौत के जिम्मेदार समाज के अजीत या बरजोर जैसे दुराचारी व्यक्ति ही हैं।

इदन्नमम (सन् 1994)

'इदन्नमम' श्यामली और सोनपुरा नामक उत्तर भारत के दो पिछड़े गाँवों के साधारण लोगों के भोगे हुए जीवन की कथा है। यह उपन्यास उन निरीह ग्रामीण लोगों का महाकाव्य है, जो किसान न रह सके और मजदूर भी न बन पाए। संवेदना की गहराई में लिखी यह कृति समकालीन उपन्यासों में एक मील का पत्थर है।

'इदन्नमम' में तीन पीढ़ियों की स्त्रियाँ एक साथ संघर्षरत दिखाई देती हैं। उपन्यास के आरंभ में सोनपुरा के स्वर्गीय जागीरदार सुभाग सिंह की पत्नी और वहाँ के भूतपूर्व प्रधान महेंदर सिंह की माँ बऊ (दादी) तेरह साल की अपनी पोती मंदाकिनी को लेकर सोनपुरा से श्यामली आती है। सोनपुरा मे स्वयं बनाए अस्पताल के उद्‌घाटन के समय महेंदर सिंह की हत्या होती हैं उसके बाद उनकी पत्नी चेयरमैन रतन यादव के साथ चली जाती हैं बऊ की संपत्ति के एकमात्र वारिस मंदा को प्रेम अपने पास रखना चाहता है मंदा को प्रेम अपने पास रखना चाहती है। मंदा को प्रेम के पास रखना बऊ असुरक्षित समझती हैं।

पुलिस और रतन यादव से मंदा को बचाने के लिए बऊ मंदा को लेकर श्यामली दादा पंचमसिंह की पनाह में आती है। पंचमसिंह अपने भाईयों का विरोध सहकर भी शरणागत बऊ तथा मंदा को पनाह देते हैं। दादा के बेटे विक्रम सिंह के बेटे मकरंद के साथ मंदा की सगाई होती हैं बाद में मकरंद के माता–पिता यह सगाई तोड़कर उसे शहर ले जाते हैं। माँ प्रेम द्वारा केस वापास लेने पर शारीरिक एवं मानसिक रूप से टूटी मंदा बऊ से सोनपुरा वापस जाने की जिद्‌द करती है।

बऊ को लेकर मंदा सोनपुरा आती हैं। यहाँ आकर उन्हें सब बदला हुआ नजर आता है। मंदा अपना दुःख भूलकर गाँववालों की विवशता, लाचारी एंव गरीबी से दुखी हो जाती है। गाँववालों का दुख दूर करने और उन्हें रोजगार देने को कटिबद्ध होती है। ग्रामीण के सहयोग से ट्रैक्टर खरीदकर किसान से भिखारी बने गाँववालों की समस्या सुलझाने का प्रयास करती है। अभिलाख जैसे दुराचारी व्यक्ति की धमकी से डरती नहीं। मंदा अपने परिश्रम से सोनपुरा के अस्पताल में डॉक्टर लाने में कामयाब होती है पर यह जानते ही दुखी होती है कि डॉक्टर और कंपाउंडर चुनाव तक ही हैं। मंदा चुनाव का बहिष्कार करती है। गाँववालों की प्रेरणा बन जाती है। अभिलाख के बेटे से जगेसर की बेटी सुगना की सगाई, फिर अभिलाख द्वारा सुगना पर बलात्कार की कोशिश, सुगना द्वारा अभिलाख की हत्या और स्वयं आत्महत्या की कोशिश, झाँसी के अस्पताल में सुगना की मृत्यु, अभिलाख के पोस्टमार्टम रिपोर्ट पर सुगना की माँ की गिरफ्तारी, पुलिस द्वारा मंदा की खोज जैसी घटनाओं से मैत्रेयी जी ने अत्याचार, अन्याय और षोषण का जीवंत चित्रण किया है। इसके साथ ही उपन्यास की नायिका, मंदा के असमान्य व्यक्तित्व को

उजागर किया है। जो अपने हितैषियों के उपदेशों की परवाह किए बिना मुसीबतों और झंझटों का सामना करती है। अन्याय के खिलाफ लड़ने का दृढ़ संकल्प लेकर सोनपुरा वापस आने वाली मंदा नारी शक्ति का प्रतीक है।

इस उपन्यास में मैत्रेयी ने नारी को केंद्र में रखकर भारतीय ग्रामीण समाज की हर एक समस्या को चित्रित किया है। प्रमुख समस्या है नारी शोषण। इस उपन्यास का ताना–बाना नारी शोषण और नारी संघर्ष की घटनाओं से बुना हैं यौवन में विधवा बनी बऊ का अनुभव है कि लोगों की आँखें जायदाद और जमीन पर थी। वृद्धावस्था में गोविदसिंह संरक्षक बनकर उनकी संपत्ति हड़प लेता है। महेंदर सिंह की विधवा प्रेम का संरक्षक बनकर रतन यादव उसकी जागीर बिकवाकर, बूढ़े के साथ उसकी दूसरी शादी भी करवा देता है और बऊ के खिलाफ कोर्ट में मुदमा दाखिल करवाता है। मंदा भी शोषण को सहती हैं साँवले रंग और गाँव–गाँव में भटकते रहने का आरोप लगाकर मकरंद के माँ–बाप उसे बहू बनाने से इन्कार करते हैं। पंद्रह साल की उम्र में ही वह बलात्कार की शिकार बनती है।

इस उपन्यास की दूसरी पात्र 'कुसमा' पति द्वारा तिरस्कृत होने पर संयुक्त परिवार के विशेष माहौल में अविवाहित अमरसिंह की दया और प्यार की पात्र बन जाती है और बेटे को जन्म देती है। मजदूरिन अहिल्या पर मोहित होकर जगेसर का खेत बेचकर पहाड़िया खरीदना, उसके साथ अलग रहना, ऊब जाने पर बीमारी का आरोप लगाकर, निकृष्ट जानवर के समान ठुकरा देना, पहाड़िया बेचकर बीबी बेटों के पास आना ये सब नारी शोषण के दयनीय चित्र हैं। जगेसर की पत्नी और बेटी सुगना दोनों घर में पिता के अत्याचार एवं शराब की लत से परेशान हैं। तुलसिन–गणेशी दद्दा, लीला–अभिलाख का अनैतिक संबंध भी नारी शोषण का एक अलग पक्ष है। अभिलाख की मजदूरिन अवध की नाबालिक लड़की की शादी में जहरीले जंतु का भोजन बनाने से दूल्हा–दूल्हन सहित सारे लोगों की मृत्यु में मजदूरों को भूखों मरने के लिए विवश करने वाले ठेकेदार, पहाड़िया मालिकों का विकराल रूप प्रकट होता है। श्यामली सांप्रदायिक दंगे में अनाथ बनी बन्नेसाहब की बेटी को आजीविका के लिए देह बेचने को मजबूर होना पड़ता है। इस प्रकार 'इंदन्नमम' में नारी शोषण के विविध रंग और ढंग पूरी सहजता एवं विकरालता के साथ उजागर करने में लेखिका को सफलता मिली हैं इस शोषण और अत्याचार का

सामना मंदा करती है। संक्षेप में यह उपन्यास अत्यन्त नारी शोषण के खिलाफ नायिका मंदा के संघर्ष की कहानी है।

लेखिका ने दलित मजदूर वर्ग की आजीविका से लेकर शिक्षा के क्षेत्र में आरक्षण तक की स्वातंत्रयोत्तर भारत की राजनीतिक, सामाजिक समस्याओं को उपन्यास में समेटकर पाठकों को सोचने के लिए बाध्य किया हैं कायले के महाराज का शिष्य मृगुदेव आश्रम में आने से पहले हरिदास नामक डॉक्टरी का छात्र था, प्रथम परीक्षा में अव्वल आता है, पर अन्य छात्र उसे हीनता की दृष्टि से देखते हैं क्योंकि वह अनुसूचित जाति का है। इसी कारण उसकी प्रतियोगिता में मिली डॉक्टरी की सीट को मानने के लिए तैयार नहीं थे। आरक्षण के गुण–दोषों की उपन्यास में चर्चा की है। इसके साथ ही सांप्रदायिक दंगे, चुनाव, नौकरशाही, रिश्वतखोरी, राजनीति का ढोंग, मजदूरों का शोषण, पड़ने वाले निरीह ग्रामीण, विधवा की दयनीय दशा जैसी समस्याओं के साथ गाँव के गीत, पर्व, आहें, रूढ़ियों और परंपराओं में जकड़ी ग्रामीण जनता के ह्रदय की 'धड़कन' है 'इदन्नमम'।

उपन्यास का शीर्षक 'इदन्नमम' यह मेरा नहीं, मेरे लिए नहीं, सार्थक है। नायिका मंदा की जिंदगी अपनी नहीं, अपने लिए नहीं। सशक्त, आत्मनिर्भर, विकसित, शिक्षित सोनपुरा ही उसका लक्ष्य है। जिसके लिए वह अपनी जिंदगी समर्पित करती है।

चाक (सन् 1997)

मैत्रेयी पुष्पा का एक अन्य महत्वपूर्ण उपन्यास है 'चाक'। चाक में ब्रजप्रदेश के अतरपुर गाँव की कथा को आधार बनाया है। अतरपुर जाट किसानों का गांव है। गाँव में प्रच्छन्न रूप में जमीदारी प्रथा है। पंचायतीराज, राजनीति और चुनावी तिकड़म है। भ्रष्टाचार व मुकदमेबाजी है। स्त्री उत्पीड़न है और पुरूष–व्यवस्था के खिलाफ स्त्री–विद्रोह भी हैं चाक उपन्यास का कथ्य– 'स्त्री विमर्श' हैं चाक की सभी स्त्री–पात्र पुरूषों की तुलना में अधिक सजग और प्रेरक हैं। वे व्यैक्तिक स्तर पर ही नहीं, सामाजिक स्तर पर भी उन मूल्यों और रीतियों से जूझने का यत्न करती हैं, जहाँ उन्हें एक 'व्यक्ति' का अधिकार प्राप्त नहीं है। पुरूषप्रधान समाज और परिवार की अनेक सीमा–रेखाओं को पार करती है। विधवा जाटिनी स्त्री रेशम अवैध गर्भ धारण करती है। उसे दिवंगत पति के घर में जन्म देना चाहती है। जिसे

वह अपराध नहीं मानती। अपने विचार और निर्णय पर अटल रहती है। रेशम की हत्या होती हैं अवैध संतान को अपना नाम देने की उसकी तमन्ना उसकी देह के साथ ही मिट जाती है।

लेखिका स्त्री स्वतंत्रता का पहला सोपान देह को ही मानती है। उपन्यास की नारी पात्र मनुष्य होने के कारण देह की आवश्यकता को पूरा करना जरूरी समझती है। डॉ, शशिकला त्रिपाठी के मतानुसार–''नैतिकता का बंधन स्त्री के लिए ही अधिक मायने रखता है। नैतिकता का विषय ही स्त्री को संयमित करता है।''[28] इस उपन्यास की प्रमुख पात्र सारंग एक सजग स्त्री है। अपनी बहन रेशम की हत्या से व्यथित होती है। रेशम की हत्या पहली हत्या नहीं हैं उपन्यास के आरंभ में ही उन औरतों की जानकारी प्राप्त होती है। जो सतीत्व के नाम पर बलि चढ़ाई जाती हैं, पुरूष के शोषण का शिकार होती हैं।

सारंग रेशम के हत्यारे का सजा देने का प्रण करती हैं सारंग को विश्वास है कि पति रंजीत उसकी हर तरह से मदद करेगा। रंजीत सारग की इच्छा का आदर करते हुए रेशम के हत्यारे डोरियों के खिलाफ पूरे गाँव में 'अकेले' खड़ा होता हैं उसे थाने में बंद करवाता है। हाईकोर्ट में अपील करना चाहता हैं सारंग रंजीत को अन्याय के खिलाफ आवाज उठाने को प्रेरित करती है। गाँववालों के विरोध की तथा बातों की परवाह नहीं करती। पर डोरिया गवाह के अभाव में छूट जाता है। सारंग को धमकी देता है। सारंग डोरिया को मुँहतोड़ जवाब देती हैं उसकी धमकी से डरती नहीं। न ही अपने बेटे चंदन को रंजीत को बड़े भाई दलवीर के पास भेजना चाहती है। सारंग रंजीत का हौसला बढ़ाती है, उसकी गाँव छोड़ने की बात से सहमत नहीं होती। कन्या गुरूकुल के कठोर अनुशासन में पढ़ी सारंग अनुशासन प्रिय हैं सारंग निडरता से काम करना चाहती है। इसलिए वह स्कूल के शिक्षक श्रीधर का साथ पाकर अपनी समस्या सुलझाना चाहती है। उसमें आत्मविश्वास हैं वह लोगों की चर्चा का केन्द्र बन जाती है। पति रंजीत सारंग के कार्यों में हस्तक्षेप करता है। उस पर शक करता है तब घर में जंग की शुरूआत होती हैं पति–पत्नी एक दूसरे के विरोधी बन जाते है। सारंग के लिए श्रीधर की मैत्री इतनी मधुर हो

---

28 त्रिपाठी शशिकला– 'उत्तर शती के उपन्यासों में स्त्री स्त्री–मुक्ति बनाम सत्ता–संघर्ष, पृ. 64

जाती है कि उसकी रक्षा के लिए भावावेश में किए गए देह–समर्पण पर उसे तनिक भी अपराधबोध नहीं होता।

बिगड़ी हुई स्थितियों के कारण बौखलाया हुआ रंजीत सारंग से मार–पीट, गाली–गलौच करता है। गाँव के लोग रंजीत की स्थिति का फायदा उठाते हुए उससे गलत काम करवाने का प्रयत्न करते हैं। रंजीत श्रीधर की भी पिटाई करता है। सारंग अपने आपसे, गाँव के लोगों से, रंजीत से संघर्ष करती रहती है। रंजीत सारंग को वस्तुमात्र समझता है। पर इसके बावजूद वह चुनाव में खड़ी होकर पुरुष–प्रधान समाज को चुनौती देती है और चुनाव जीत जाती है। अपना अलग अस्तित्व दिखा देती है।

उपन्यास में गुलकंदी, कलावती चाची, लौंगसिरी बीबी आदि औरतें हैं जिनकी अपनी कहानी हैं कथानक को बढ़ाने का काम इन पात्रों द्वारा किया जाता है। समय–समय पर यही औरतें सारंग की ताकत बनती हैं। मैत्रेयी पुष्पा ने 'चाक' उपन्यास में राजनीति, सरकारी कामकाज, गाँव की जाति–पाँति की व्यवस्था, उत्सव, त्यौहार आदि का खुलकर चित्रण किया है। शिक्षा व्यवस्था के प्रति गाँव में हो रही गड़बड़ी को चित्रित किया है। स्कूल का हेडमास्टर थानसिंह स्वार्थ प्रवृत्ति का व्यक्ति है। जो कई घटिया कदम उठाता है जैसे– बच्चों को अनुत्तीर्ण करना, टयूशन लेना, स्कूल की बिल्डिंग के नाम पर पैसे कमाना, स्कूल का मुआयना न करना। इस परेशानी के कारण श्रीधर का विद्रोह भाव थानसिंह का तबादला करने में प्रकट होता है। गाँव में जाति–पाँति का चलन है। सारंग का श्रीधर के पैर छूना गाँव में चर्चा का विषय बनता है। गुलकुंदी का निम्नजाति के बिसुनदेवा के साथ भाग जाना उसकी मृत्यु का कारण बनता है। सारंग की संवेदना को तल्ख बनाने में लोकगीतों और लोककथाओं का भी भरपूर योगदान है। त्यौहारों का व्यापक चित्रण कर, उत्सव तथा इन अवसरों पर गाए जाने वाले लोकगीतों को प्रस्तुत किया है।

सारंग के लिए अतरपुर गाँव में बदलाव लाना कठिन था। उसे सबका (गाँव वाले, पति) विरोध सहना पड़ता है। मैत्रेयी अपने उपन्यास की नायिका सारंग में यह बल भर देती हैं कि उसके लिए कोई भी काम मुश्किल नहीं, वह अपनी मंजिल पाने में कामयाब होती है।

झूला नट (सन् 1999)

'झूला नट' हिन्दी का एक विशिष्ट उपन्यास है। उपन्यास का प्रारम्भ शीलों के वैवाहिक जीवन से होता है। शीलों गाँव की रहने वाली एक सामान्य स्त्री है। उसका विवाह सुमेर से होता है। जो पुलिस विभाग में थानेदार है। विवाह वह माँ की जिद् तथा मृत पिता को दिए वचन को निभाने के लिए करता है। परन्तु शीलों के साथ पति–धर्म नहीं निभाता। शहर लौट जाता है। शीलों पति की वापसी के लिए किसी सामान्य औरत की भाँति व्रत व पूजा–पाठ करती है। किन्तु उसकी मनोकामना पूरी नहीं होती। सुमेर में कोई बदलाव नहीं आता। यह जानकर शीलों भी स्थिति से समझौता कर लेती है। सुमेर ने शहर में दूसरा विवाह कर लिया है इस बात से दुखी होकर शीलों क्रोध से अपने हाथ की छठी अंगुली को गँड़ासे से काटकर अपना भाग्य बदलना चाहती है। इस घटना के बाद सास बहू के व्यवहार में अंतर आ गया। वह दो औरतों की तरह रहने लगी। दोनों एक–दूसरी की व्यथा समझती हैं। एक विधवा है, तो दूसरी परित्यक्ता।

बालकिशन शीलों की व्यथा समझने तथा उसे दूर करने का प्रयास करता है। बालू की माँ भी शीलों का दुःख *दूर करना* चाहती है। बालू की माँ बालू को शीलों के कमरे में भेजकर दरवाजा बंद कर देती है। शीलों और बालकिशन के बीच शारीरिक संबंध स्थापित हो जाता है। यह गाँववालों के लिए चर्चा का विषय बन जाता है। उसके बारे में गाँववाले तरह–तरह की बातें करते हैं। लोगों की बातों से मुक्ति पाने के लिए, समाज के डर से सास शीलों को 'बछिया' करने को कहती है। शीलों के बारे में निर्णय लेने के लिए पंचायत बैठी। पर शीलों ने पंचायत के सामने जाने से मना कर दिया तथा 'बछिया' करने से इन्कार किया। आत्मविश्वास के कारण वह निडर हो जाती है। वह सोचती है, सात फेरे लेकर, सुमेर के साथ हुआ विवाह नहीं निभा सका, तो वह बालू के साथ 'बछिया' क्यों करवाए? यह दिखावा सिर्फ समाज के लिए है? परन्तु सुमेर के शहर में दूसरा विवाह कर लेने पर समाज सामने क्यों नहीं आया? विरोध की यही ज्वाला शीलों को कटघरे में खड़ा कर सकता है, तो सुमेर को क्यों नहीं? विरोध की यही ज्वाला शीलों के मन में है, जो उसे समाज के बनाए नियमों का विरोध करने की शक्ति देती है। शीलों का तर्क गलत नहीं है। समाज अपने अनुसार नियम बनाता है। शीलों उस नियम के अनुसार

चली तो उसे दुख ही मिला, इसी कारण उसका इन नियमों से विश्वास टूट गया है। शीलों अपने विचारों से गाँव, समाज, परिवार को निरुत्तर कर देती है।

शीलों अपनी स्त्री–शक्ति का परिचय देती है। वह अपने अधिकारी के लिए स्वयं प्रयास करती है। निरर्थक लोकोचारों, विरोधाभासी धर्माचारों का खंडन करती नारी देह की, स्त्री–स्वतंत्रता की वकालत करती है। समाज द्वारा स्त्री के लिए बनए नियमों को नहीं मानती। बालकिशन को मजबूत बनाती है। बड़ी ही चतुराई से ससुराल की जमीन, घर पर अपनी पकड़ मजबूत करती है। सुमेर और बालकिशन दोनों के हिस्सों पर अपना हक जताती हुई सास को निहायत कमजोर औरत बना देती है। उसकी सूझबूझ, दूरदर्शिता व कूटनीतिज्ञता से पूरा गाँव चकित है। जमीन जायदद की बात आते ही शीलों प्रतिक्रियावादी बनकर अपने तार्किक, साहसिक कथन से सरकारी मुलाज़िम सुमेर को धराशायी कर देती है। उसका तर्क सुनकर उसे अपनी नौकरी खतरे में दिखाई देने लगती है।

उपन्यास के संपूर्ण विस्तार में बालकिशन का चरित्र विकट प्रेमी का है। वह शीलों से बेईंतहा प्यार करता है। लेकिन, रस्साकशी बढ़ जाने से पच्चीस की उम्र में ही कनफटे साधुओं की शरण में आता है। दुराचरण में लिप्त साधुओं से मोहभंग होने पर ओरछा के राम मंदिर में पहुँचता है। मगर वहाँ उसे राम, लक्ष्मण नहीं, केवल सियाजू दिखाई देती हैं। नहीं सियाजू में शीलों दिखाई देती है, जिसका अंगस्पर्श वह कामेच्छा से करने लगता हैं 'झूला नट' शीर्षक की सार्थकता इसी संदर्भ से हैं। 'झूला नट' स्त्री–विमर्श की दृष्टि से एक उल्लेखनीय उपन्यास है। लेखिका ने स्त्री–शक्ति को महत्व दिया है और मौके की तलाश में रहने लगा। पान में धतूरे का बीज डालकर, कुएँ में ढकेलकर उसकी जान लेने की कोशिश करता है। गाँववालों की बातों से रज्जों परेशान होती है।

रज्जो गंगिया के साथ ईसुरी से मिलने के लिए घर से भागने का साहस करती है। परंतु देश की सिपाही बनकर गागियों को जागृत करने उनका हौसला बढ़ाने का काम करती हैं रज्जों और गंगिया आजादी के सिपाही हैं, वह देश के प्यार के खातिर रानी लक्ष्मीबाई बनकर दुश्मनों का मुकाबला करती है और देश के लिए शहीद होती है।

मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में स्त्री तथा स्त्री से जुड़े प्रश्नों को भी आधार बनाया है। उन्होंने जो प्रश्न उठाए हैं, वे अत्यंत आधुनिकतम है। उनके स्त्री पात्रों में पैनी प्रश्नातुरता और संघर्षशीलता है। मैत्रेयी की यह खूबी है कि इनकी स्त्री पात्रों में पैनी प्रश्नातुरता और संघर्षशीलता है। मैत्रेयी की यह खूबी है कि इनकी स्त्री पात्र केवल लड़ने के लिए अपने विरोधियों से नहीं लड़ती। इसके पीछे कमसद होता हैं। यह मकसद है– स्त्री द्वारा खुद अपनी अस्मिता की तलाश और समाज में अपनी उपस्थिति दर्ज करना। उनके साथ उपन्यासों में जुझारू नारी पात्र के दर्शन होते हैं मैत्रेयी जो कुछ भी कहती हैं वह पाठकों को आत्ममंथन के लिए मजबूर कर देता है। मैत्रेयी के उपन्यास इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है। उनहोंने भारतीय परिवेश में नारी की स्थिति का ममस्पर्शी चित्रण किया है।

अल्मा कबूतरी (सन् 2000)

मैत्रेयी पुष्पा का 'अल्मा कबूतरी' उपन्यास सन् 2000 में प्रकाशित हुआ था। कंजर, सांसी, नट, मदारी, सपेरे, बनजोर, बावरिया और कबूतरे, मालवा और बुंदेलखण्ड के आस–पास बसते–उजड़ते वे जनजातिगत कबीले हैं जिन्हें सभ्य व्यवस्था अपराधी कबीलों या अपराधी जनजातियों का नाम देती है।

अल्मा कबूतरी जन्मजात अपराधी जनजाति के जन जीवन को लेकर लिखी गई कथा है जिसके विस्तार में आज का पूरा राजनीतिक परिदृश्य भी है। जिसके केन्द्र में भले ही कबूतरी जनजाति के खानाबदोश हैं लेकिन इसे लेकर जो परिधि बनती है उसके भीतर आज के उत्तर भारतीय जनजीवन और राजनीति के यथार्थ का बड़ा हिस्सा है। कहानी एक ओर कदमबाई, मंसाराम के संबंधों को लेकर है तो दूसरी ओर इसमें राणा, अल्मा और रामसिंह की भूमिका भी बेजोड़ है।

उपन्यास का दूसरा भाग है– अल्मा की कहानी। अल्मा एक ऐसे स्त्री की कहानी है जो हर परिस्थिति को लाघती आगे बढ़ती है। उसका सब प्रकार से शोषण हो रहा है। विभिन्न प्रकार के शोषण होते हुए भी वह प्रवाह को बहती हुई अपने आपको आगे बढ़ाने की कोशिश करती हुई दिखाई देती है।

अल्मा और राणा के बीच पनपते रागात्मक संबंधों की यह कहानी सिर्फ इतनी ही नहीं कि राणा कल्पना लोक में रहता है और अल्मा जिन्दगी के कठोर अनुभवों में पक रही है–वह हर स्थिति को सीढ़ी बनाकर दीवार तोड़ती कबूतरी है।

''अल्माकबूतरी' उस वास्तविक यथार्थ की जटिल नाटकीय कहानी है जो हमारे अनजाने ही आस–पास घटित हो रही है। अपनी उपस्थिति में हमें बेचैन करती है। लेखिका का लोभ समाज की सतह पर कुकुरमुत्ते–सी उगी हर विद्रूप सच्चाई को आग्रहपूर्वक सजो लेना चाहता है। फलतः कबूतराओं की बदनुमा हालत, कज्जाओं की घृणा और हृदयहीनता, पुलिस का अमानवीय बर्बर रूप, चम्बल के बीहड़ों से निकलकर डाकुओं का विधानसभाओं में प्रवेश, पुलिस–अपराधियों और राजनीति का गठबंधन आदि पर टुकड़ा–टुकड़ा प्रकाश डालकर यह उपन्यास को एक कोलाज का रूप दे डालता है।''[29]

मुख्यतः 'कबूतरा' और 'कज्जा' समाज की मुठभेड़ और द्वन्द्व ही 'अल्मा कबूतरी' का केन्द्रीय विषय है। 'अल्मा कबूतरी' हारे हुए लोगों की कथा है, इसलिए इसके द्वारा पीड़ा का अनुभव होना स्वाभाविक है। यह 'सभ्य' कहे जाने वाले असभ्य समाज की करतूतों का चिट्ठा है।

अगनपाखी (सन् 2001)

'अगनपाखी' मैत्रेयी पुष्पा का उपन्यास सन् 2001 में प्रकाशित हुआ लेकिन कुछ लोगों का मानना है यह उपन्यास स्मृति दंश (1990) में प्रकाशित का विस्तार मात्र है। मैत्रेयी पुष्पा ने 'अगनपाखी' उपन्यास की भूमिका (पुनर्नवा) में इसे स्वीकार भी किया है और स्मृति दंश की नायिका को पुनर्व्याख्यायित या पुनर्जीवित करने का कारण स्पष्ट किया है, ''मुझे स्मृति दंश के पुनः पाठ ने लगभग झकझोर डाला और मैं यहाँ तक आ गई कि यह तो वह है ही नहीं जिसे मैं कहना चाहती थी। मेरे इस विचार को बल दिया इस रचना की नायिका ने। परेशान कर डालने की सीमा तक उसने मेरा पीछा किया। जिद भी बड़ी अटपटी कि वक्त की उसे इस रूप में नहीं होना था। उसके साथ न्याय नहीं हुआ। आगे लिखा अब यह एक नया उपन्यास है, हो सकता है पात्रों के नाम व स्थान वही हो, मगर अब वहाँ का इसमें कुछ नहीं है।''[30]

'अगनपाखी' उपन्यास की कथा नायिका भुवनमोहिनी तथा उसके भांजे चन्दर के इर्द–गिर्द घूमती है। ''मैत्रेयी पुष्पा ने अपनी पूर्व–परिचित दिलचस्प किस्सागोई

---

29 ब्रजेश (सं0)–सृजन संवाद 'पत्रिका' केन्द्रिय हिन्दी संस्थान, आगरा पृ0 89

30 अर्जुन चव्हाण–बीसवीं सदी का कालजयी साहित्य, पृ0सं0 202–203

के साथ इस कथा को एक नया कोण दिया है, जिसके पीछे वृन्दावन लालवर्मा के उपन्यास विराट की पद्मिनी को अनुगूँजे हैं। इस तरह संस्कार बिम्बों को जगाती हुई यह कहानी नई पुरानी दोनों एक साथ है। लोककथाओं–लोकगीतों से गुंथी अगनपाखी की भाषा फिर–फिर नई होती है– अपनी आग में जलकर जीवित हो उठने वाले पक्षी की तरह।''[31] इदन्नमम, चाक, अल्माकबूतरी, झूलानट के बाद यह कथा मैत्रेयी पुष्पा के औपन्यासिक यात्रा का एक जबर्दस्त मोड़ है।

विजन (सन् 2002)

'विजन' उपन्यास सन् 2002 में प्रकाशित हुआ। विजन उपन्यास लिखकर मैत्रेयी पुष्पा ने पाठक वर्ग को ही नहीं बल्कि आलोचकों को भी चकित कर दिया। मैत्रेयी को गाँव–गंवार की लेखिका होने का दावा करने वालों को मैत्रेयी पुष्पा ने यह उपन्यास लिखकर करारा जवाब दिया है और यह साबित किया है कि चाहे परिवेश गाँव का हो या महानगरीय, वर्तमान स्थिति की नस पकड़ना ही उनका मुख्य ध्येय है। इस उपन्यास के केन्द्र में, मुख्य रूप से है, 'शरण आई सेंटर' तथा सरकारी अस्पताल जिसके चक्रव्यूह में केवल मरीज ही नहीं बल्कि इसमें काम करने वाले कर्मचारी भी फंसे हुए हैं।

'शरण आई सेंटर' के माध्यम से लेखिका ने गैर–सरकारी सेंटर में होने वाले गोरखधंधों का खुलासा किया है। अर्जुन चव्हान 'विजन' उपन्यास के संदर्भ में अपने विचार इस रूप में प्रकट करते, ''विजन इसलिए महत्वपूर्ण नहीं कि इससे गाँव के बदले महानगर के माहौल को अभिव्यक्ति मिली बल्कि इसलिए महत्वपूर्ण है कि यह एक विशिष्ट 'प्रोफेशन सेंटर्ड' होते हुए भी अपने समय, समाज और उसकी व्यवस्था के जाल को ऐसी सूक्ष्मता तथा तटस्थता के साथ प्रस्तुत करता है जो हिन्दी उपन्यासों के सवा सौ वर्ष की यात्रा में अन्य किसी कृति में नहीं मिला।''[32]

'विजन' कहानी में नेहा का द्वन्द्व गहरी संवेदना का परिचायक है। वह पति के बारे में सोचती है तो स्वतः को न्याय नहीं दे पाती है। मैत्रेयी पुष्पा ने दोनों पात्रों (नेहा और आभा) के माध्यम से क्वालिफाइड स्त्री का दमन, परम्परागत चक्रव्यूह मुँसी शिक्षित नारी तथा इन समस्त स्थितियों की शिकार स्त्री विद्रोह का भी बड़े ही

31 मैत्रेयी पुष्पा–'अगनपाखी', वाणी प्रकाशन, आवरण पृष्ठ 141

32 अर्जुन चव्हाण–वसुधा, अंक 72, जनवरी–मार्च 2007, पृ0सं0 202–203

बेबाक ढंग से चित्रण प्रस्तुत किया है। वास्तव में 'विजन' स्त्री शक्ति के नये डाइमेंशन्स (आयाम) खोजने और खोलने का एक साहसिक प्रयोग है।

कही ईसुरी फाग (सन् 2004)

मैत्रेयी पुष्पा का 'कही ईसुरी फाग' उपन्यास सन् 2004 में प्रकाशित हुआ है। कई लोगों ने इसे शोध प्रबंध कहा जिसका जवाब मैत्रेयी पुष्पा ने एक साक्षात्कार में इस रूप में दिया है, "जिस तरह अन्य उपन्यास लिखे हैं, उसी तरह 'कही ईसुरी फाग' भी लिखा है। मेरा मकसद था ईसुरी की प्रेमिका रजऊ, जिसको उनकी तमाम मांगें संबोधित हैं, अपनी जिंदगी के साथ उपन्यास में आए। रजऊ ने विवाहित होकर लोककवि, ईसुरी के प्रेम को कैसे स्वीकार किया, उसे कितना इंसाफ मिला और कितनी यातना? कवि जो प्रसिद्धि पाता है, उस यश के झंडे का बास प्रेमिका की पीठ में गड़ा होता है और उस यश के नीचे छलना का दर्द सहती हुई, रजऊ का हाल क्या था? 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में कवि ने अपना दायित्व क्यों नहीं निभाया, क्यों रजऊ ही आजादी के युद्ध की निमित्त बनी फागों की सार्थकता रजऊ से है, सफलता ईसुरी ने जरूर पाई।"[33]

शास्त्रीय भाषा में ईसुरी शुद्ध 'लम्पट' कवि है– उसके अधिकांश भाग में एक पुरुष द्वारा स्त्री को दिए शारीरिक आमन्त्रणों का उत्सवीकरण है, जिनमें श्रृंगार काव्य की कोई मर्यादा भी नहीं है। इस उपन्यास का नायक, ईसरी है। मगर कहानी रजऊ की है– प्यार की रासायनिक प्रक्रियाओं की कहानी जहाँ ईसुरी और रजऊ दोनों के रास्ते बिल्कुल विपरीत दिशाओं को जाते हैं। प्यार बल देता है तो तोड़ना भी है.....।

इस उपन्यास के सन्दर्भ में विचार प्रस्तुत करते हुए विजय बहादुर सिंह लिखते हैं, "अतिश्योक्ति न माना जाय तो ईसुरी के बगैर अगर बुंदेलखण्ड की पहचान सम्भव नहीं है तो रजऊ के बगैर ईसुरी की तो इन तीनों की ठीक–ठीक पहचान के लिए मैत्रेयी का लेखन अपरिहार्य है।"[34]

---

33 विजय बहादुर सिंह–हंस, नवम्बर 2004, पृ0सं0 87

34 सुनील सिद्धार्थ–वसुधा, अंक 72, जनवरी–मार्च 2007, पृ0सं0 104

त्रिया–हठ (सन् 2004)

मैत्रेयी सचमुच अपने आप में अलग प्रकार की लेखिका है, क्योंकि इस छोटी सी कालावधि में उन्होंने केवल 'स्मृति दंश' उपन्यास का 'अगनपाखी' के रूप में पुनर्लेखन नहीं किया बल्कि 'त्रिया हठ' उपन्यास भी 'बेतवा बहती रही' का पुनर्लेखन है। जो सन् 2004 में प्रकाशित हुआ।

'त्रिया हठ' उपन्यास की कथा भले ही उर्वशी के जीवन को केन्द्र में रखकर लिखी गई है, लेकिन यहाँ अपनी माँ के जीवन के सत्य को ढूँढ़ने के लिए उसका अपना बेटा देवेश निकल पड़ा है। वह नए सिरे से अपनी माँ के जीवन से जुड़े तंत्र खोजता है, उन सारे पात्रों से मिलता है, जिनमें उर्वशी का संबंध रहा है। देवेश और अन्य पात्रों के माध्यम से लेखिका, मैत्रेयी पुष्पा ने उर्वशी के चरित्र का रेशा–खोलकर पाठक को नए सिरे से इस बात पर विचार करने के लिए विवश किया है।

गुनाह–बेगुनाह (सन् 2011)

गुनाह–बेगुनाह का प्रकाशन सन् 2011 ई0 में हुआ। 'गुनाह–बेगुनाह' मैत्रेयी पुष्पा का एक ऐसा उपन्यास है जिसमें एक तरफ आज के पुलिस के अनैतिक कारनामों का कच्चा चिट्ठा है तो दूसरी ओर ग्लोबल होते देश के वैविध्य सुख के पीछे की वह त्रासदी है जिसमें जर्जर–रूढ़ियों, सड़े–गले रस्में–रिवाजों से बंधी लड़कियाँ आज भी कहीं 'डायन' शब्द अपने नंगे शरीर पर घाव सा चिपकाए गली–मुहल्ले में घुमायी जाती हैं तो कहीं पशुओं सी बेंच दी जाती हैं। कहीं किसी अपराध को बिना किए अपने सर लेने को विवश है। तो कहीं घरों में ही मार डाली जाती हैं। कहीं उन्हें बचपन में ही ब्याह दिया जाता है तो कहीं बिना जनमें ही टुकड़े–टुकड़े कर खुरच डाली जाती हैं।

भारतीय समाज में ताकत का सबसे नजदीकी सबसे देशी और सबसे नृंशस चेहरा है– पुलिस। ''कोई हिन्दुस्तानी जब कानून कहता है, तब भी और जब सरकार कहता है तब भी, उसकी आँखों के सामने कुछ खाकी सा ही रहता है। इसके बावजूद थाने की दीवारों के पीछे क्या होता है, हममें से ज्यादातर नहीं जानते। यह उपन्यास हमें इसी दीवार के उस तरफ ले जाता है और उस रहस्यमय

दुनिया के कुछ दहशतनाक दृश्य दिखाता है और सो भी एक महिला पुलिसकर्मी की नजरों से।''[35]

इला और समीना, 'गुनाह–बेगुनाह' की ये दो प्रमुख पात्र इस समाज में होते इसी प्रयास के वे चेहरे हैं जिनमें इन रूढ़िगत परम्पराओं को तोड़ने का साहस भी है तो खुद के भीतर कुछ सही और अच्छा करने का विश्वास भी। अपने भीतर के इसी विश्वास को थामे इला पुलिस विभाग को चुनती है और समीना पत्रकारिता को। जो बाद में इला से प्रभावित होकर पुलिस विभाग में आ जाती है। दोनों का उद्देश्य एक ही है, जो अधिकार लड़कियों को नहीं मिल पाते अथवा जो झूठी सजा अपना दोष न होने के बाद भी उन्हें काटनी पडती है ये दोनों उन्हें इससे बचा सकें। इन दोनों के भीतर समय की धारा से युद्ध करने की चुनौती भी है और विश्वास भी। यूँ बाद में दोनों को समझ में आता है कि जितना आसान वे सब समझती हैं, उतना ही नहीं।

लेखिका ने इन दोनों पात्रों के माध्यम से गाँव और कस्बे का वह रूप दिखाया है जहाँ गए युग का सूरज नई तकरीब के सहारे धीरे–धीरे किरणें फैला रहा है। ये दो मुख्य चरित्र सिर्फ सामाजिक और न्यायिक रूप के विवरण होते चेहरे को ही नहीं दिखाते बल्कि इनमें जुड़कर कथानक में और भी ऐसे कई चरित्र प्रवेश पाते हैं, जो पाठक को भीतर तक हिला कर रख देते हैं।

अपनी बेलाग और बेचैन कहानी में यह उपन्यास हमें बताता है कि मनुष्यता के खिलाफ सबसे वीभत्स दृश्य कहीं दूर युद्धों के मोर्चों और परमाणु हमलों में नहीं, यही हमारे घरों से कुछ ही दूर सड़क के उस पार हमारे थानों में अंजाम दिए जाते हैं और यहाँ उन दृश्यों की साक्षी है बीसवीं सदी में पैदा हुई वह भारतीय स्त्री जिसने अपने समाज के दयनीय पिछड़ेपन के बावजूद मनुष्यता के उच्चतर सपने देखने की सोची है। मर्यादा सत्ता की एक भीषण संरचना यानी, भारतीय पुलिस के सामने उस स्त्री के सपनों को रखकर यह उपन्यास एक तरह से उसकी ताकत को भी आजमाता है और कितनी भी पीड़ाजन्म सही एक उजली सुबह की तरफ इशारा करता है।

---

35 पुष्पा मैत्रेयी–गुनाह–बेगुनाह, राजकमल पेपर बैक्स, आवरण पृष्ठ 37

फरिश्ते निकले (2014)

'फरिश्ते निकले' मैत्रेयी पुष्पा का नया उपन्यास है, जिसमें उन्होंने 'बेला बहू' का वृतान्त रचा है। यह वृतान्त जटिल किन्तु कई परतों में बदलते 'ग्रामीण भारत' का दस्तावेज बन गया है। बेला बहू के जीवन में जो घटनाएँ घटती हैं और जिन व्यक्तियों के साथ उसका वाद–विवाद–संवाद होता है उनका मन में उतर जाने वाला वर्णन मैत्रेयी ने किया है– ''बिन्नू! कोई आदमी जहाँ–तहाँ या थोड़ा–मोड़ा नहीं होता। वह जब होता है तो अपने गुन–अवगुनों के साथ पूरा–पूरा होता है, इतनी बात हम जानते हैं तो तुम भी अवश्य जानती होगी।''[36]

जिन्दा रहने और आजाद रहने के अर्थ को व्यापक अर्थ में समझाती बेला बहू हिन्दी उपन्यास साहित्य के कुछ अविस्मरणीय चरित्रों में से हैं। उपन्यास की कथा को कई उपशीर्षकों– बेला बनाम बेला बहू। बालिका वधू। बेला बहू का प्यार। बेला बहू का रंग–महल। बेला बहू की टोली। रक्तरंजित धरती और लथपथ बेटी। पीतल की गाड़ी रईसों का खटका। ए मोहब्बत, तेरे अंजाम पे.....। सिरोधन उँटरा : मोहब्बत का दूत। बेला बहू का स्कूल में बाँटा गया है।

सरल और व्यंजक भाषा में रचा गया यह उपन्यास लेखिका की रचनाशीलता का आगे बढ़ा हुआ कदम तो है ही, हिन्दी उपन्यास की नवीनतम उपलब्धि भी है।

नमस्ते समधर (2021)

कुन्तल ने चाहा था कि एक साहित्यिक संस्था के ज़िम्मेदार पद पर आई है तो साहित्य को समाज की मशाल बनाने का उद्योग करेगी। कुछ ऐसा करेगी कि उस मँझोले शहर का कोना–कोना साहित्य के स्पर्श से स्पन्दित हो उठे। युवा प्रतिभाओं को वह आकाश मिले जो उनका हक़ है, और मनुष्य को वह दृष्टि जिससे मनुष्यों का यह क्षुद्र संसार भी जीने योग्य हो उठता है। लेकिन उसे पता भी नहीं लगा, और जाने कितने तीरों, कितने आरोपों, कितने सवालों की नोक पर उसे रख दिया गया। उसका सपने देखना, वह भी स्त्री होकर, यही उसका अपराध हो गया। राजनीति की सबसे निकृष्ट चालों से लिथड़ा साहित्य–संसार अचानक उसे एक काली कारा जैसा महसूस हुआ।

---

36 पुष्पा मैत्रेयी–फरिश्ते निकले, राजकमल प्रकाशन, पेपरबैक्स, आवरण पृष्ठ 45

अकेले बैठकर वह बस सोचती ही रह जाती कि जिन शब्दों से सृष्टि के संताप को व्यक्त करने, आदमीयत की उलझनों को खोलने का काम लिया जाना था, वे संकीर्ण स्वार्थों के हड़ियल हाथों का खिलौना कैसे बन गए, कब और क्यों! मैत्रेयी पुष्पा का 'नमस्ते समधर' उपन्यास इन्हीं सवालों से जूझता हुआ, साहित्य और संस्कृति की दुनिया के उन कोनों से परदा उठाता है, जहाँ शब्दों की बाज़ीगरी अपने निकृष्टतम रूप में दिखाई देती है, और जहाँ एक उत्साहसम्पन्न, विज़नरी स्त्री उस यथार्थ से हार–हार कर लड़ती जाती है, जिस यथार्थ को न्याय के पैरोकारों ने अपनी छिछली स्वार्थपरता से गढ़ा है। सुगढ़ भाषा और सान्द्र स्त्री अनुभव से रचा यह उपन्यास हमारे समय के साहित्यिक समाज, राजनीतिक दिग्भ्रम और मर्दाना वर्चस्व से हर जगह लड़ती औरत की समग्र कथा है।

1.4 कहानियों का संक्षिप्त वर्णन

मैत्रेयी जी ने 'धर्मयुग' और 'साप्ताहिक हिंदुस्तान' पत्रिका की कहानियों से प्रेरित होकर कहानी लिखना शुरू किया। 'साप्ताहिक हिंदुस्तान–' में छपी कहानी उन्हें लेखक बनाने में सार्थक बनी। मैत्रेयी जी के कुल पाँच कहानी संग्रह प्रकाशित हुए हैं– 'गोमा हँसती है' 'ललमनियाँ', 'चिन्हार' इन तीन कहानी संगहों में से इस प्रतिनिधिक कहानियों को चुनकर चौथा कहानी संग्रह 'दस प्रतिनिधि कहानियाँ' और पाँचवा कहानी संग्रह 'पियरी का सपना' नाम से प्रसिद्ध हुआ हैं उनकी सभी कहानियाँ रोचक तथा भावपूर्ण हैं। मैत्रेयी जी ने आर्थिक दृष्टि से अविकसित और पिछड़े ग्रामीण अंचलों के परिवेश को कथा का आधार बनाया हैं ग्रामीण नारी का सजीव अंकन किया है। उनकी कहानियाँ किसी न किसी रूप में स्त्री के संघर्ष को व्यक्त करती हैं। नारी जीवन के रहस्य को प्रकट करती हैं। लेखिका ने स्वयं जो भोगा–सहा है, उसी को कहानी के माध्यम से उजागर किया है, जिसमें अनुभव की सघनता और अभिव्यक्ति का खुलापन है। उन्होंने कुछ कहानियों में पारिवारिक जीवन का चित्रण किया है। 'अपना–अपना आकाश' में बेटों की स्वार्थ प्रवृत्ति, 'सहचर' में पति–पत्नी के प्रेम का, 'मन नाँहि दस बीस;' में एकनिष्ठ प्रेमी के प्रेम का चित्रण किया है।

मैत्रेयी पुष्पा ने कहानियों के द्वारा मुख्य रूप से ग्रामीण जन जीवन तथा ग्रामीण स्त्री की समस्याओं को ही वाणी दी है। मैत्रेयी पुष्पा का मानना है कि

''इक्कीसवीं सदी की पूर्ण–अपूर्ण विकास योजनाओं में वैज्ञानिक चमत्कार चिकित्सा में नए–नए आयाम, कीर्ति स्तंभों के प्रतिमान, महानगरों की बहुमंजिली इमारतों में, अखबारों के पृष्ठों पर आकाशवाणी और दूरदर्शन के गैरसरकारी–सरकारी माध्यमों के जरिए भले ही धमाके करते रहें, गाँव की धरती पर विकास की अपेक्षा निराशा अधिक मची है।''[37]

इसलिए शायद मैत्रेयी पुष्पा ने अपनी कहानी का कैनवास गाँव अंचल से चुना। मैत्रेयी जीवन के यथार्थ की कहानीकार हैं। इनकी कहानियों में कथ्य का वैविध्य समाविश्ट है जिसमें सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनैतिक मनोवैज्ञानिक समस्याओं के साथ–साथ स्त्री की समस्याओं का आयाम है। मैत्रेयी की कहानियाँ केवल समस्याओं को ही उजागर नहीं करती बल्कि पाठक के मन मस्तिष्क को झकझोरते हुए समाधान का प्रश्न भी खड़ा कर देती है।

मैत्रेयी ने अब तक कुल सात कहानी संग्रह लिखे हैं–

मैत्रेयी के कहानी संग्रह–

1. 'चिन्हार'
2. 'ललमनियाँ'
3. 'गोमा हँसती है'
4. 'पियरी का सपना'
5. 'प्रतिनिधि कहानियाँ'
6. 'समग्र कहानियाँ'
7. 'छाँह'।

चिन्हार

मैत्रेयी पुष्पा का प्रथम कहानी संग्रह है जिसका पहला संस्करण सन् 1991 ई0 में सन् 'चिन्हार' कहानी संग्रह के सन्दर्भ में लेखिका के विचार हैं कि–''सजावटी बैठकों में वातानुकूलित कमरे में या उच्च शिक्षित परिवारों में पली–बढ़ी रहती–बसती नारी के आहत अहं की कहानियाँ नहीं हैं। 'चिन्हार' में देश की अस्सी प्रतिशत जनता का प्रतिनिधित्व करती औरत की व्यथा कथा है। मुझे गौरव है उस औरत पर

---

37 कमल प्रसाद (सं0)–वसुधा, अंक 72, जनवरी–मार्च 2007, पृ0सं0 115

जो अनपढ़ होकर भी बुद्धिमान, साधन–विपन्नता झेलते हुए भी स्नेहमयी, गूँगी होकर भी कर्मशील, असभ्य कहलाकर भी सत्यनिष्ठ और सब तरफ से घिरी होकर भी मुक्त होने के लिए कटिबद्ध है।

इन कहानियों के माध्यम से मैत्रेयी पुष्पा ने ग्रामीण नारी की त्रासदी, उनका विद्रोह परिवर्तित युग में ग्रामीण परिवेश में उत्पन्न परिवेश तथा उसकी समस्याओं का दारूण चित्र अंकित किया है। 'चिन्हार' कहानी–संग्रह की भूमिका में मैत्रेयी लिखती हैं कि 'चिन्हार' की कहानियों के बारे में चर्चा करते हुए हंस संपादक राजेन्द्र यादव ने कहा था, ''तुमने इन दस्तावेजों में अनुभवों की बहुमूल्य पूँजी को बेदर्दी से खर्च किया है।''[38]

इन कहानियों के माध्यम से मैत्रेयी पुष्पा ने ग्रामीण नारी की त्रासदी, उनका विद्रोह परिवर्तित युग में ग्रामीण परिवेश में उत्पन्न परिवेश तथा उसकी समस्याओं का दारूण चित्र अंकित किया है।

'चिन्हार' कहानी–संग्रह के सन्दर्भ में अशोक गुप्त की टिप्पणी इस प्रकार है, कुछ वर्षों में हिन्दी कहानी के जरिए समाज में व्याप्त शोषण को जिस तरह से सहज स्वीकृति दी जा रही है। वह चिंता का विषय है। इसके चलते जीवन–मूल्यों की चर्चा और मानवीयता के सन्दर्भ अनिवार्य, अप्रासंगिक होते जा रहे हैं।

ऐसी कहानियाँ पाठक के मन में एक ऐसी निराशा गहराती है, जिसके बीच आस्था का संचार कठिनतर होता है। 'चिन्हार' की कहानियाँ इस कठिन कार्य को चुनौती की तरह स्वीकार करती हुई सामने आती हैं और यही वृत्ति इन कहानियों की मूल ताकत है।

वास्तव में लेखिका ने अपने जिए हुए परिवेश को जिस सहजता से प्रस्तुत किया है, जिस स्वाभाविकता से उससे अनेक रचनाएँ मात्र रचनाएँ न बनकर, अपने समय का, अपने समाज का एक दस्तावेज बन गई हैं। इस कहानी संग्रह में कुल बारह कहानियाँ हैं –

इसमें कुछ मिलाकर बारह कहानियाँ संग्रहित हैं–

1. अपना–अपना आकाश

---

38 पुष्पा मैत्रेयी–'चिन्हार' कहानी संग्रह, आर्य प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण–2009 पृ0सं0 07

2. बेटी

3. सहचर

4. बहेलिये

5. भँवर

6. सफर के बीच

7. आक्षेप

8. कृतज्ञ

9. मन नाही दस–बीस

10. हवा बदल गई है

11. केतकी

12. चिन्हार

संग्रह की प्रथम कहानी 'अपना–अपना आकाश' संतान के प्रति अत्यधिक प्रेम के कारण अधिकारों से बेखबर माँ की है। कैलाशो, देवी को क्या पता था कि उसे अपने ही घर में बेगाना होना पड़ेगा ? तीन बेटों के होते हुए भी वह निराधार महसूस करती है। माँ, लगाओ अँगूठा।' मझले ने अँगूठे पर स्याही लगाने की तैयारी की ली। लेकिन उन्होंने चिकू से पैन माँगकर टेढ़े–मेढ़े अक्षरों में बड़े मनोयोग से लिख दिया –'कैलाशो देवी'।

इस कहानी में मैत्रेयी ने यह संदेश दिया है कि जायदाद के मामलों में महिलाओं को अपने हकों के प्रति सचेत रहना चाहिए।

'शिक्षा नारी के लिए आवश्यक है' 'बेटी' कहानी में यही बात सामने आती है। मैत्रेयी ने यहाँ यह दिखाया है कि माँ बेटे को पढ़ाती है, बेटी को नहीं। यह भी एक पुरुष प्रधान संस्कृति की व्यवस्था है जिसे तोड़ने की जरूरत है। क्योंकि शिक्षित नारी एक ही नही, दोनों घरों का उद्धार करती है।

'सहचर' कहानी में पति अपनी पत्नी के प्रति किस प्रकार एकनिष्ठ रहकर अपनी भूमिका निभाता है, यह दर्शाया गया है। पत्नी को गेंगरीन हो जाता है फिर भी पति उसका साथ नही छोड़ता।

'बहेलिये' कहानी में अनेक समस्याओं को मैत्रेयी ने उद्‌घाटित करने की कोशिश की है। क्षयरोगी के साथ गिरजा की बहन का ब्याह और उसका वैधव्य।

भोली के साथ बलात्कार की समस्या जिससे आतंकित होकर वह आत्महत्या कर लेती है। और तीसरा मुद्दा भ्रष्टाचार का है। 'मन नाहि दस–बीस' कहानी चंदना और स्वराज वर्मा की है। जाति प्रपंचों के कारण चंदना का विवाह प्रेमी से न होकर एक नपुंसक से हो जाता है। कहानी में जीवन–साथी के चयन की समस्या, दापंत्य जीवन में उत्पन्न दरार आदि का वर्णन है।

'हवा बदल चुकी है' कहानी नारी के प्रति मनचाहे व्यवहार, जातीयता, चुनावी मुद्दों से भरी कहानी है। कहानी का नायक सुजान है।

'आक्षेप' कहानी में अकेली नारी पर समान द्वारा लगाये गए विभिन्न आक्षेपों की चर्चा है। रमिया रूपवान स्त्री इस कथा के केन्द्र में है।

'कृतज्ञ' कहानी में मुरली के बीमार पिता की मदद वसुधा द्वारा किये जाने पर वह उसके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करते हुए उसे 'भगवान' कहकर संबोधित करता है किन्तु अनुपम, वसुधा के पति को वसुधा का परोपकारी स्वभाव पसंद है।

'भँवर' एक स्वाभिमानी नारी 'विरमा' की सहनशीलता की कथा है। इस कहानी के जरिये मैत्रेयी कहना चाहती है कि भारतीय समाज में नारी का शोषण हर जगह, हर तरह से हो रहा है। जब वह अपना आत्माभियान जाग्रत करने का प्रयास करती हैं तब उसे विद्रोह, कुलटा कहा जाता है।

'सफर के बीच' कहानी गिरिराज आज के शिक्षित युवक वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है। इसमें गिरिराज के मनः स्थिति का वर्णन है। गिरिराज को व्यवहार में खोखलापन बिल्कुल पसंद नही था।

'केतकी' कहानी नारी विद्रोह का पोल खोलने वाली उत्कृष्ट कृति है। 'केतकी' के माध्यम से मैत्रेयी ने एक ऐसी स्त्री को रेखांकित किया है जो अपने देह के साथ किए गए खिलवाड़ को बर्दाश्त नहीं करती और गंधर्व सिंह को उसके किए की सजा देती है।

'चिन्हार' कहानी एक नारी की सहनशीलता को व्यक्त करता है। यह एक स्त्री के मुखर न होने वाली ममता का उत्कृष्ट उदाहरण है।

इस प्रकार मैत्रेयी पुष्पा के 'चिन्हार' संग्रह की कहानियाँ ''रेहन में चढ़ा बुढ़ापा, विकी हुई आस्थाएँ, कुचले हुए सपने, धुँधलाता भविष्य इन्ही दुःख–दर्द की घटनाओं के ताने–बाने से बुनी इक्कीसवीं शताब्दी की देहरी पर दस्तक देते भारत

के ग्रामीण समाज का आईना है। एक ओर आर्थिक प्रगति, दूसरी ओर शोषण का यह सनातन स्वरूप ! चाहे 'अपना–अपना आकाश' की अम्मा हो, 'चिन्हार' की सरजू या आक्षेप की रमिया, या 'भँवर' की विरमा–सबकी अपनी–अपनी व्यथाएँ है, अपनी–अपनी सीमाए! इन्हीं सीमाओं में बँधी, इन मरणोन्मुखी मानव–प्रतिमाओं का स्पंदन सहज ही सर्वत्र अनुभव होता है –प्रायः हर कहानी में।

ललमनियाँ

ललमनियाँ में हर कथा रचना के साथ विषय वैविध्य और परिपक्वता का परिचय देता है कथाकार का यह दूसरा कहानी संग्रह है जो सन् 1996 में प्रकाशित हुआ। इस कथा में मैत्रेयी ने नारी के विविध भाव–भंगिमाओं को व्यक्त किया है। कुल मिलाकर नारी के जन्म से लेकर बुढ़ापे तक की चर्चा विविध उदाहरण के बारे में भी विचार करती हैं। इस संग्रह में कुल दस कहानियाँ हैं–

1. फैसला
2. सिस्टर
3. सेंध
4. अब फूल नहीं खिलता
5. रिजक
6. बोझ
7. पगला गई है भागवती
8. छाँह
9. तुम किसकी हो बिन्नी?
10. ललमनियाँ।

'फैसला' कहानी एक स्त्री का अपने अधिकारों के प्रति सचेत होने की कथा है। कहानी की नायिका 'वसुमती' का चुनावी क्षेत्र में सहभाग का वर्णन है। जहाँ वह अपने अंतरात्मा की आवाज सुनकर सही निर्णय लेते हुए पति के विरूद्ध विरोधी पक्ष को वोट देकर अपनी जाग्रत चेतना का परिचय देती है। और अपने मनोभावों को अपने मास्टर साहब से चिट्ठी के माध्यम से व्यक्त करती है–

'लेखिका मैं क्या करती ?

अपने भीतर की ईसुरिया को नहीं मार सकी।

क्षमा करना'।

'सिस्टर' कहानी व्यक्ति के अकेलेपन और इससे उपजी त्रासदी को अभिव्यक्त करती है कि एकाकीपन व्यक्ति के लिए कितना बड़ा अभिशाप है। रिटायर सिस्टर डिसूजा को सुरेशचन्द्र का परिवार मिलता तो है लेकिन वे भी उसके साथ व्यवहारिक तथा उपयोगिता को लक्ष्य कर रिश्ता जोड़ते है। अर्थात् एक अकेली स्त्री का शोषण समाज की यथार्थता को व्यक्त करता है।

'सेंध' कहानी गंगा सिंह की है जो एक किसान से मजदूर बनकर शहर में पलायन करता है। उसके खेत चकबन्दी में चले जाते है जिस पर अधिकारियों की मिली भगत से समाज कल्याण की सेविका कला जी हथिया लेती है। वही कला जी उसके सामने वोट के लिए उससे गुहार लगाती है। यहाँ गंगा सिंह की सज्जनता, सदाचारी का वर्णन है।

'अब फूल नहीं खिलते' कहानी लेखिका के जीवन यथार्थ से जुड़े प्रसंग को कहानी रूप में उद्घाटित करता है जहाँ महाविद्यालीय शिक्षा के दौरान झरना का यौन शोषण स्वयं गुरूजन ही करते हैं।

'रिजक' कहानी है लल्लन की जो डिलेवरी की कला में माहिर है। पति आसाराम जेल से आकर यूनियन बनाता है और ऐसे कार्यों पर पाबन्द लगाता है। मास्टर की बहू तड़पकर मर जाती है ऐसे में, किन्तु मोदी की बहू के साथ ऐसा न हो इसलिए जाति बिरादरी की सब दीवारों को तोड़कर उसने अपने 'रिजक' को पहचाना।

'बोझ' कहानी बच्चों की परवरिश की समस्या से जुड़ी कथा है। कामकाजी दम्पत्ति का बेटा है 'अक्षय'। जिसे दिन भर के लिए क्रैश में डाला जाता है। बच्चों के विकास के विभिन्न पहलुओं को उजागर करने की कोशिश यह कहानी करती है।

'पगलागई है भागवती' कहानी में बाल विधवा भगवती पालती पुत्री की अकाल मृत्यु से एकांकी जीवन जीने के लिए अभिशप्त है। मैत्रेयी ने विधवा स्त्री के अकेलेपन की त्रासदी का चित्रण बड़े ही मार्मिक ढंग से किया है।

'छाह' कहानी गाँव में जमींदार रह चुके है ददुआ की हैं। पत्नी और बेटी

रेशमा की मृत्यु ने उन्हें तोड़ दिया है किन्तु गाँव के प्रति मोह से वे घिरे है। पुत्री के पुत्र वेदू के एकमात्र बालक ददुआ उसकी परवरिश को लेकर परेशान है। उनके दोनों पुत्र जायदाद तो बँटवाने की चाह रखते हैं। लेकिन उन्हें आश्रय देना उनके लिए विपदा है। बताशो द्वारा वेदू को गोद लिये जाने पर वह फिक्रमंद होते हैं। यह पुत्रों द्वारा एक उपेक्षित पिता की कथा है।

'तुम किसकी हो बिन्नी?' मैत्रेयी पुष्पा की कहानी उनके खुद के भोगे यथार्थ की घटना है जिसमें उन्होंने एक माँ द्वारा पुत्री पर किए गए व्यवहार व सोच को व्यक्त किया हैं। एक माँ के मातृत्व प्रेम से वंचित पुत्री बिन्नी की यह कहानी बड़े ही मार्मिक, संवेदनशील ढंग से व्यक्त है।

'ललमनियाँ' कहानी मैत्रेयी पुष्पा ने कलाकार की अभिव्यक्ति को महत्व दिया है। 'ललमनिया' एक नृत्य प्रकार है। नायिका को जब यह कहा जाता है कि शादी के बाद तुम यह नहीं कर सकोगी। तो इस शर्त को वह कबूल नहीं करती। कहानी यही शिक्षा देती है कि सच्चे कलाकार अपनी कला को किसी भी समझौतो पर नहीं छोड़ते। कहानी में मैत्रेयी ने नायिका को अत्यन्त स्वाभिमानी बताया है जो अपने जीवन में घटित घटना को बहुत सरलता से लेती है और उसे नृत्य के द्वारा व्यक्त करती है।

यह कहानी अत्यन्त रोचक एवं पठनीय है। 'ललमनिया' इस कहानी संग्रह को यह नाम दिया गया, वह भी सार्थक है। 'ललमनिया', कहानी संग्रह नारी के विविध रूपों कर्तव्यों, भावनाओं, जिम्मेदारियों को प्रस्तुत करता है। इस कृति में नारी शक्ति के ऐसे पहलुओं को उद्धृत किया गया है जो नारी स्वयं नहीं जान पा रही है कि वह इतनी सशक्त हो सकती है।

स्वातंत्र्योत्तर काल में भारत के ग्रामीण परिवेश में आए बदलाव के कारण गाँव के जीवन में कई सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक, आर्थिक संकट उभर आए हैं। इस परिवेश में व्याप्त विभिन्न समस्याओं जैसे–भ्रष्ट पंचायत व्यवस्था, चुनाव प्रणाली, स्वार्थ सिद्ध संबंध, विकास योजना का शिकार गाँव का भोला–भाला आदमी, रोजगार के लिए शहर की ओर रूख करने वाले मजबूर गाँववासी, पारंपरिक व्यवसायों का विघटन, कला संस्कृति में आए बदलाव, नारी समस्या, स्त्री चेतना एवं उसका विरोध आदि का चित्रण किया गया है।

गोमा हँसती है –

मैत्रेयी पुष्पा का तृतीय कहानी–संग्रह 'गोमा हंसती है' सन् 1998 में प्रकाशित हुआ। इस सग्रह में कुल मिलाकर दस कहानियाँ संग्रह हैं जो समय–समय पर विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं। 'गोमा हँसती है' की कहानियों के केन्द्र में है नारी, और वह अपने सुख–दुःखों यंत्रणाओं और यातनाओं में तपकर अपनी स्वतंत्र पहचान माँग रही है। उसका अपने प्रति ईमानदार होना ही 'बोल्ड' होना है, हालाँकि वह बिल्कुल नहीं जानती कि वह क्या है, जिसे 'बोल्ड' होने का नाम दिया जाता है। नारी चेतना की यह पहचान या उसको सिर उठाकर खड़े होने में ही समाज की पुरुषवादी मर्यादाएँ या महादेवी वर्मा के शब्दों में "श्रृंखला की कड़ियाँ चटकने–टूटने लगती है। औरत को लेकर बनाई गई शील और नैतिकता पर पुनर्विचार की मजबूरी पैदा करती है।"[39] 'गोमा हँसती है' की कहानियों की नारी अनैतिक नहीं, नई नैतिकता को रेखांकित करती है।

इन कहानियों की भावनात्मक नाटकीयता निस्संदेह हमें चकित भी करेगी और मुग्ध भी। ये सरल बनावट की जटिल कहानियाँ है जिनके सम्बन्ध में राजेन्द्र यादव ने कहा है कि "गोमा हँसती है, सिर्फ एक कहानी नहीं कथा जगत् की एक 'घटना' भी हैं।"[40]

'गोमा हँसती है' संग्रह में कुल दस कहानियाँ है –

1. शतरंज के खिलाड़ी
2. राय प्रवीण
3. बिछुड़े हुए
4. प्रेम भाई एण्ड पार्टी
5. ताला खुला है पापा
6. सांप सीढ़ी
7. उज्रदारी
8. रास
9. बारहवीं रात

---

39 महादेवी वर्मा–श्रृंखला की कड़िया, भारती शंकर, इलाहाबाद, पृ0 23

40 मैत्रेयी –गोमा हँसती है, किताबघर प्रकाशन, आवरण पृ0 77

10. गोमा हंसती है

राजनीति में महिलाओं को स्थानीय संस्थाओं के स्वर तक आरक्षण दिया गया है। परन्तु महिलाओं की स्थिति सिर्फ पुरुषों का मोहरा बनने तक ही सीमित है। मैत्रेयी पुष्पा ने 'शतरंज के खिलाड़ी' में ग्राम प्रधान के चुनाव के मार्फत इस हकीकत का पर्दाफाश किया है।

बुन्देलखण्ड की पृष्ठभूमि में गाँव के प्रधान ठाकुर प्रीतमसिंह तथा धनपालसिंह अपनी–अपनी पत्नियों को मोहरा बनाकर चुनाव में खड़ा कर देते हैं। चाले उसके पति ही चलते हैं और अंततः लड़ मरते हैं।

मैत्रेयी पुष्पा ने प्रचलित स्वरूप से अलग स्त्री यातना को ऐतिहासिक सन्दर्भ में 'राय प्रवीण' में प्रस्तुत किया हैं। ''इसमें किस्सागोई' प्रेमगाथा और समसाययिक सन्दर्भ एक साथ गुंफित होते दिखते है। एक साथ कई स्तरों पर चलने वाली यह कहानी नारी दासता व प्रतिरोध का जटिल व मार्मिक आख्यान है।''[41]

कहानी की सावित्री गाँव वालो को भूख से बचाने के लिए अपने तन का सौदा करती है। इससे उसके दाम्पत्य जीवन में दरार पड़ती है। चरित्र हीनता की उपाधि देते हुए पति उसे घर से बाहर निकालता है।

'बिछुड़े हुए' एक दम्पत्ति की कथा है पति सुग्रीव पत्नी को छोड़ देता है और साधुगिरि करता है। पति की जिम्मेदारियों से लापरवाह पिता का कर्तव्य एक माँ द्वारा बखूबी निभाया गया हैं।

'प्रेम भाई एण्ड पार्टी' कहानी में परिवार मे बेटी की शादी की समस्या का चित्रण है जहाँ घर में एक व्यक्ति जो नेता बन जाता है उसे घर की समस्याएँ बताना मुश्किल हो जाता है। विन्दों ब्राह्मणी होकर नाऊ के बेटे से प्रेम करती है। कहानी में एक स्त्री (माँ) द्वारा स्त्री (बेटी) का शोषण होते दिखाया गया है। 'ताला खुला है पापा' बिंन्दों के अधिकारों के हनन की कहानी है।

'साँप–सीढ़ी' कहानी में दहेज की समस्या और उसकी वजह से दाम्पत्य जीवन में कड़वाहट की स्थिति का चित्रण है।

'उज्रदारी' कहानी में पति की मृत्यु के बाद शांति के जेठ–जिठानी, शांति

---

41 डॉ0 नीरज खरे–बीसवीं सदी के अंत में हिन्दी कहानी, क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी, पृ0सं0 65

तथा उसके सोमू के साथ अमानवीय व्यवहार करते है। विधवा जीवन का दयनीयता को स्पष्ट करते हुए शांति कहती है कि मैं जानती थी सब कुछ। इसमें नया क्या था ? हर औरत की आदमी मरने के बाद यही दशा होती है।'

नायिका प्रधान यह कहानी 'रास' जैमन्ती के जीवन में प्रतिष्ठा और उसके स्वाभिमान की है। ससुर के व्यभिचार से क्रोधित वह मायके वापस आती है कभी वापस न जाने के लिए।

'बारहवीं रात' दहेज प्रथा की क्रूरता की कहानी है जहाँ बहू–सीता सास के अत्याचारों के कारण मर जाती है।

'गोमा हँसती है' की कहानी किड्डा और गोमा की है। गोमा पति की कुरूपता, अपने स्वार्थ तथा यौन संतुष्टि के लिए बलीसिंह से संबंध बनाती है। किड्डा पत्नी की बेवफाई को जानकर भी विवश है। उसकी विवशता को लेखिका ने बड़े ही कारूणिक ढंग से प्रस्तुत किया है।

''इन साधारण और छोटी–छोटी कथाओं को 'साइलैंट रिवोल्ट' (निरशब्द विद्रोह) की कहानियाँ भी कहा जा सकता है क्योंकि नारीवादी घोषणाएँ इनमें कही नहीं है। ये वे अनुभव खण्ड हैं जो स्वयं 'विचार' नही है मगर उन्हीं के आधार पर 'विचार' का स्वरूप बनता है।''[42]

प्रख्यात आलोचक एवं हंस पत्रिका के संपादक राजेन्द्र यादव के अनुसार '''गोमा हंसती है' की कहानियों के केन्द्र में है नारी और वह अपने सुख–दुःखों, यंत्रणाओं और यातनाओं में तपकर अपनी स्वतंत्र पहचान माँग रही है। उसका अपने प्रति ईमानदार होना ही बोल्ड होना है, हालांकि वह बिल्कुल नहीं जानती कि वह क्या है जिसे 'बोल्ड' होने का नाम दिया जाता है। नारी चेतना की यह पहचान या उसके सिर उठाकर खड़े होने में ही समाज की पुरुषवादी मर्यादाएँ या महादेवी वर्मा के शब्दों में श्रृंखला की कड़ियाँ, चटकने–टूटने लगती हैं। वे औरत को लेकर बनाई गई शील और नैतिकता पर पुनर्विचार की मजबूरी पैदा करती है। 'गोमा हंसती है' कहानियों की नारी अनैतिकता नहीं, नई नैतिकता को रेखांकित करती है।''[43]

---

42 मैत्रेयी पुष्पा –'गोमा हँसती है।' किताबघर प्रकाशन, आवरण पृष्ठ 46

43 राजेन्द्र यादव–गोमा हँसती है, कवर पृ0, किताब घर प्रकाशन, नई दल्ली, संस्करण–2010

पियरी का सपना

'पियरी का सपना' की कहानियाँ संसार में स्त्री और स्त्री के संसार को सामने ला खड़ा करती है। ''इसमें स्त्री चेतना की वे कहानियाँ हैं जो इस बात की पैरवी करती हैं कि स्त्री भी एक इंसान होती है। स्त्री अपने जीवन को अपने ढंग से जीना चाहती है, वह मुस्कुराना चाहती है, खिलखिलाना चाहती है और प्रेम करना चाहती है। विडम्बना यही है कि उसे अपनी इस चाहत के बदले लांछन और बेड़िया मिलती हैं।''[44] इस प्रकार मैत्रेयी के लेखन में स्त्री के साथ किए जाने वाले भेदभाव की पीड़ा और छटपटाहट ही दिखाई देती है।

उनका नजरिया कहानियों में बेआवाज खुलता नजर आता है। 'पियरी का सपना' उनका नवीनतम कहानी संग्रह है जिसमें वह अपने विकास और सम्पूर्ण सामर्थ्य के साथ मौजूद है। 'मुस्कुराती औरतें' जहाँ इस बात का जवाब देती हैं कि अलबम के पहले पन्ने पर मुरली की तस्वीर क्यों मौजूद है, वहीं 'रिश्ते का नक्शा' उस सच का पर्दाफाश करती है जो बताता है कि मोहल्ले के किसानों की नींद क्यों उड़ गई थी? कैसे एक पुस्तकालय एक कहानी का आधार बना?

'आवारा न बन' की बाक्सर लड़की का टूट पड़ा गुस्सा हो या बदमाश महकमे से रिश्ता, 'छुटकारा की छन्नो का डूबता दिल हो या बहुत पहले का चलन का सच, कथाकार की तल्लीन संलग्नता उसे एक कथा शिल्पी की पहचान देती है। उसकी स्त्री किसी के द्वारा प्रदत्त सुरक्षा नहीं चाहती, चाहती है, सिर्फ अपनी सामर्थ्य ताकि कोई उसके चेहरे पर तेजाब न फेंक सके।

संबंध की गौरी हो या गुनहगार की पंचायत और बहू आरक्षित की साधना हो या मैंने महाभारत देखा था कि ब्रजेश, मैत्रेयी समाज के हर हिस्से की स्त्री के सच का खुलासा कहानी में करते हुए एक जागरण अभियान ही चला रही हैं। उनके यहाँ एक निरंतर युद्ध है उस असंवेदनशील समाज से जो लड़कियों के लिए अन्यायी है। 'पियरी का सपना' कहानी संग्रह में कुछ चौदह कहानियाँ हैं–

1. मुस्कराती औरतें
2. रिश्ते का नक्शा

---

44 डॉ0 राजेन्द्र यादव (सं0)–'हंस' नवम्बर 2010, अंक–04, पृ0सं0 70

3. आवाज न बन

4. छुटकारा

5. बहुत पहले का चलन

6. जवाबी कागज

7. संबंध

8. गुनहगार

9. मैंने महाभारत देखा था

10. आरक्षित

11. हम बच्चों की कहानी

12. 1857 एक प्रेमकथा

13. गुल्लू

14. पियरी का सपना

प्रथम कहानी 'मुस्कराती औरतें' की स्त्री अपने प्रति समाज के रवैये से चकित है किन्तु भयभीत नहीं, भले ही उसे 'आवरा' कहा जाए।

'पियरी का सपना' संग्रह की दूसरी कहानी 'रिश्ते का नक्शा' में भी स्त्री, पुरुष को मात देने के लिए कमर कसकर खड़ी लड़की के रूप में दृढ़ दिखाई देती है। कहानी की नायिका पंचायत को चुनौती देने का दम रखती है –क्यों नहीं मानेगी ? पंच का फैसला तो हर आदमी को मानना पड़ता है।

'आवरा न बन' कहानी में जो क्षेत्र पुरुषों के लिए रक्षित माने गए है –उनमें घुसपैठ करने के जज्बे का जोखिम स्त्री द्वारा उठाये जाने का अंकन है। कहानी के केन्द्र में नीलू है।

'पियरी का सपना' संग्रह की 'छुटकारा' कहानी में 'रज्जों' छन्नो दलित स्त्रियों की दो पीढ़ियों का प्रतिनिधित्व करती हैं। छन्नों की सीने में चिंगारी है तो रज्जो की अभिव्यक्ति में आग है।

'बहुत पहले का चलन' कहानी में भी स्त्री जीवन की सत्यता वर्णित है।

'संबंध' की कहानी गौरी पर केन्द्रित है। तो 'मैंने महाभारत देखा था' के केन्द्र में ब्रजेश के जीवन की सच्चाई है।

'1857 एक प्रेमकथा' में गंगिया बेड़नी और रज्जों का एक भिन्न किन्तु

व्यापक संसार है।

समाज में किसी स्त्री को प्रेम की सहज अनुभूति मिलना कितना कठिन है, उसे 'जबाबी कागज' की कहानी में बखूबी देखा जा सकता है।

'पियरी का सपना' रति तिवारी नामक स्त्री की कहानी है जो अपने प्रथम प्रेम को सीने में दबाए उस पुरुष के साथ जीवन व्यतीत करती है जो उसका पति है, प्रेमी नही।

खुद मुख्तार दिखने वाली स्त्री और अल्हड़ युवती पर समाज की कुंठित सोच का दबाव एक–सा है। उसे स्वतंत्रता कही नहीं है लेकिन जब पानी सिर से ऊपर गुजरने लगता है तो स्त्री अकुलाकर विद्रोह कर बैठती क्योंकि यही उसके पास अंतिम मार्ग शेष रहता है। 'पियरी का सपना' एक स्त्री के दिवा स्वप्नों की कथाएँ नही वरन् स्त्री अस्तित्व की मर्मस्पर्शी कहानियाँ है जो पहली बार में ही मन मस्तिष्क पर अमिट छाप छोड़ जाती हैं।

छाँह

अपने समय और समाज विशेषकर स्त्री समाज से जुड़े रचनाकारों का यो तो कहने के लिए बहुत बड़ी जमात है लेकिन स्त्री तथा स्त्री के तमाम धूप–छांह को समझने का अनुभव मैत्रेयी जैसी लेखिका के लेखन में स्पष्ट झलकता है।

मैत्रेयी जी की कहानियाँ एक खास लीक पर चलने की बजाय जीवन की सभी ॠतुओं से युक्त होती है। उनकी कहानियों की विशेषता है कि उनमें निराशा में भी आशा का संयोजन होता है। स्त्रियाँ मैत्रेयी पुष्पा की कहानियों की बड़ी शक्ति हैं। वे उनके साहित्य में जहाँ भी हैं पूरी दबंगता और जीवन्तता से हैं व अपनी छाप छोड़ती हैं। उनकी कुछ ऐसी ही उल्लेखनीय कहानियों का यह संकलन है–'छाँह'

'छाँह' कहानी संग्रह में कुल मिलाकर बारह कहानियाँ हैं–

1. फैसला ('ललमनियाँ' कहानी संग्रह में प्रकाशित)
2. तुम किसकी हो बिन्नी? ('ललमनियाँ' कहानी संग्रह में प्रकाशित)
3. राय प्रवीण ('गोमा हँसती है' कहानी संग्रह में प्रकाशित)
4. सेंध ('ललमनियाँ' कहानी संग्रह में प्रकाशित)
5. आक्षेप ('चिन्हार' कहानी संग्रह में प्रकाशित)
6. रास ('गोमा हँसती है' कहानी संग्रह में प्रकाशित)

7. कृतज्ञ ('चिन्हार' कहानी संग्रह में प्रकाशित)

8. ललमनियाँ ('ललमनियाँ' कहानी संग्रह में प्रकाशित)

9. अपना–अपना आकाश ('चिन्हार' कहानी संग्रह में प्रकाशित)

10. गोमा हँसती है ('गोमा हँसती है' कहानी संग्रह में प्रकाशित)

11. सिस्टर ('ललमनियाँ' कहानी संग्रह में प्रकाशित)

12. छाँह ('ललमनियाँ' कहानी संग्रह में प्रकाशित)

1.5. आत्मकथा

मैत्रेयी पुष्पा द्वारा लिखित 'कस्तूरी कुंडल बसै' आत्मकथा का प्रथम भाग सन् 2002 में प्रकाशित हो गई थी। ऐसे बहुत कम रचनाकार होते हैं जो आत्मकथा जैसी विधा में हाथ डालते हों। लेकिन मैत्रेयी ने यह जोखिम उठाकर इस विधा में भी सफलता पाई है और 'कस्तुरी कुंडल बसै' के बाद साहित्यिक चर्चा में भी रही है। मैत्रेयी पुष्पा से जब यह सवाल किया कि उन्होंने इतनी जल्दी आत्मकथा क्यों लिखी जबकि बड़े–बड़े लेखक आत्मकथा लिखने से हिचकिचाते हैं। तो उन्होंने उत्तर दिया, ''मुझे यह लगा कि आत्मकथा लिखने के लिए ईसा और मंसूरी जैसी नैतिकता चाहिए। चेहरा, नाम और पहचान बदलकर तो लेखक सब पर कोड़े बरसाता ही रहता है। इसलिए आत्मकथा एक आत्मविमर्श भी है। मैंने आत्मकथाएँ पढ़ी थी। मुझे माँ याद आ गई। उनका व्यवहार, मेरे साथ अटपटा बर्ताव। उनके कारण रिश्तों के जाने कितने अनदिशे अंधेरे–उजाले। तो मैंने लिखना शुरू किया। खुद को........ माँ को। यह जरूर है इसमें चालबाजियाँ नहीं है।''[45]

''मैत्रेयी अपने होने के अर्थ को अपनी माँ कस्तुरी देवी के होने में तलाशती है, इसलिए यह जितनी आत्मकथा है, इससे अधिक माँ की जीवन–कथा। यहाँ यह तथ्य उल्लेखनीय है कि मैत्रेयी पुष्पा का यह आत्मकथात्मक उपन्यास पढ़ते हुये तस्लीमा नसरीन की आत्मकथा 'मेरे बचपन के दिन' और 'दोहरा अभिशाप' का स्मरण हो आना स्वाभाविक है, क्योंकि ये तीनों लेखिकाएँ अपने वजूद को अपनी माँ के व्यक्तित्व में तलाशती है। अन्तर अवश्य है कि जहाँ तस्लीमा और कौसल्या बैसंती

---

45 वीरेन्द्र यादव–हंस, अगस्त 2002, पृ0सं0 88

के आत्मवृत्तांत में माँ और बेटी के संबंध कई जटिलताओं से युक्त है।''[46]

आत्मकथा के माध्यम से मैत्रेयी पुष्पा ने जीवन के कितने ही कटु सत्यों को पाठक के सम्मुख उघाड़ दिया है। इसमें न उन्होंने माँ को छोड़ा है न ही अपने पति की विचारधारा को प्रश्रय दिया है।

कस्तूरी के भाग्य में दाम्पत्य सुख बड़ा न था पति हीरालाल की मृत्यु उस वक्त हुई जब मैत्रेयी केवल अट्ठारह माह की थी। कस्तूरी विधवा हो गयी। आजादी के बाद जमींदारी प्रथा समाप्त तो हुई पर किसान को लगान की दस गुना राशि जमा करने पर ही अपने खेतों का स्वामित्व दिया जाता था, जो साधारण असंभव–सा था।

विजय बहादुर सिंह कहते हैं, ''कस्तुरी कुंडल बसै' में उन्होंने स्त्री का जैसा आत्मदर्शन किया है, वह आत्मकथा के बहाने आत्म–विमर्श भी है। यह आत्म–विमर्श उस 'स्त्री' का भी है जो बेटी तो है लेकिन आगे–पिछे माँ–पिता, रिश्ते–नाते, प्रेमी–पति और पुत्र–पुत्रियाँ जुड़े हैं। इसमें आत्मकथा पढ़कर ऐसा लगता है कि मैत्रेयी का स्त्री विमर्श–परिवार विमर्श भी है और समाज विमर्श भी। वह परम्परा अगर है तो आधुनिकता और इतिहास विमर्श भी।''[47]

इस प्रकार उनकी आत्मकथा का प्रथम भाग समाप्त होता है जिसमें सच को सच कह सकने की यह ताकत खुलकर और बुलंदी में कह सकने वाली यह आवाज कबीर की उक्ति ''सीस उतारै भुंई धरै'' की याद दिलाती है।

गुडिया भीतर गुड़िया

यह मैत्रेयी पुष्पा की आत्मकथा का दूसरा भाग है। जिसमें उन्होंने पूरे साहस से अपने जीवन का खुला चिट्ठा इस कृति में रख दिया है।

मैत्रेयी ने अपने जीवन में आए चाहे–अनचाहे मोड़ों की सत्यता, स्पष्टता निडरता और अद्भुत साहसिकता के साथ प्रस्तुत किया है। जिंदगी के सफर की बड़ी ही तलख सच्चाइयों से रूबरू हुई हैं गुड़िया भीतर गुड़िया लेखिका।

आत्मकथा के इस खण्ड में राम कहानी वहां से शुरू होती है जहां एम्स के डॉक्टर से विवाह के बाद दिल्ली जाकर मैत्रेयी का बसना होता है। छोटे से शहर

---

46 विजय बहादुर सिंह–वसुधा, अंक 72, जनवरी–मार्च 2007, पृ0सं0 11

47 मैत्रेयी पुष्पा –खुली खिड़कियाँ, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003, पृ0 6

के गुनगुने अलसाए से माहौल से निकलकर महानगर की जटिल और तेज रफ्तार जिंदगी के बीच अपने व्यक्तित्व को तिरोहित होते देखकर मैत्रेयी के मन में अपनी अलग पहचान बनाने की आकांक्षा जोर मारती शोध कार्य या उच्च अध्ययन की कोशिशे नाकाम होने पर एक लेखिका के रूप में उभरने और अपनी नियति के नए–नए सिरे से लिखने का अभियान, बड़े निराशाजनक ढंग से शुरू होता है।

पति के साथ हिन्दुस्तान टाइम्स जाना, वहाँ कुछ लेखक/कवि जैसे बालस्वरूप राही, जयप्रकाश भारती, हिमांशु जोशी मिले थे। मैत्रेयी द्वारा कविताये दी जाती है मगर उन्हें एक तरफ रखकर सपांदक महोदय ताबड़तोड उनका कमरा नम्बर नोट करने पर लग गये थे।

अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान फैकल्टी मेंबर डॉक्टर जो जब उनकी गिरफ्त में था। पति का करिश्मा, कविता संग्रह छपकर आ गया। किसी ऐसे प्रकाशन से जिसका नाम कभी देखा–सुना नहीं था। ऐसे मामूली उपलब्धियों से तो पहचान बनने से रही ? तो फिर ? प्रेम कहानी प्रतियोगिता में उतरना है।

'मैं प्रेम कहानी कैसे लिखूँ' मैत्रेयी सोचती है –''मुझे वहीं लौटना होगा, जहाँ मैं ढीठ लड़की की तरह बराबर मानती रही–प्रेम मेरी कमजोरी सही, लेकिन तेरी ताकत भी प्रेम में ही है।''[48] भले ही पहले प्रयास में उन्हें सफलता न मिली हो, लेकिन कुछ स्त्री साहचर्य के अभिलाषी संपादकों और मार्गदर्शन व्यक्तियों को झेलते हुए पति की छाया से निकलकर, अपनी प्रतिभा के बल पर, इस इकियानूसी को ठेंगा दिखाने से दृढ़ संकल्प ने उन्हें हिन्दी कथा जगत के अजायबहार में कैसे–कैसे भटकाया। इसका लगभग एकांगी मगर दिलचस्प खाका खींचा है इन्होंने।

पुरुषों के चरित्र के पर्त–दर–पर्त उधेड़ने में उन्होंने सबका कच्चा चिट्ठा खोला है, बेबाकी से। मैत्रेयी ने डॉ0 सिद्धार्थ और राजेन्द्र यादव के साथ अपने संबंधों को बेबाकी के साथ स्वीकार किया है। पति द्वारा राजेन्द्र यादव के साथ अपने संबंधों को लेकर बुरी आहत होती है। जिसकी जिक्र उन्होंने अपनी इस पुस्तक में किया है। राजेन्द्र यादव से अपने संबंध को स्पष्ट करने की एक नाकाम–सी मगर मन को छू लेने वाली कोशिश में वह उनमें अपने बाबा की छाया

---

48 मैत्रेयी पुष्पा –खुली खिड़कियाँ, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003, पृ0सं0 6

देखती हैं, लेकिन इन्हीं राजेन्द्र यादव से आई–आई0 टी0 कानपुर के गेस्ट हाउस में वह बुरी तरह आक्रांत और भयभीत नजर आती है।

अपनी तीनों बेटियों द्वारा वह लेखन के लिए प्रोत्साहन पाती रही, जिसका जिक्र भी अपने पुस्तक में किया है। अपने लेखन, अपने सफलता के फलस्वरूप वह विरोधी लेखकों द्वारा निन्दा की पात्र भी बनती हैं। कुछ लोग 'इदन्नमम्' को तीसरे और चौथे दर्जे की रचना और 'अधूरी अहीर कथा' कहकर ध्वस्त करने का आनंद लेने के लिए जी–जान से जुटे थे। जिस चरित्र को बहुत कुशलता से चित्रित करने में लेखिका को सफलता मिली, वह है उनके पति डॉक्टर साहब का व्यक्तित्व। उनकी चरित्रगत विशेषताएँ, पति जो पत्नी की सफलताओं पर गर्व और यश को लेकर उल्लासित है मगर सम्पर्को को लेकर 'मालिक' की तरह सशंकित।

इस प्रकार घर परिवार के बीच मैत्रेयी के बीच मैत्रेयी ने वह सारा लेखन किया है जिसे साहित्य में बोल्ड, साहसिक और आपत्तिजनक इत्यादि न जाने क्या–क्या कहा जाता है। वे हिन्दी की बदनाम मगर अनुपेक्षणीय लेखिका के रूप में स्थापित है।

1.6 नाटक

मन्दाक्रान्ता

मैत्रेयी पुष्पा का यह नाटक नायिका प्रधान नाटक है। मैत्रेयी जी की यह रचना 'मंदाक्रान्ता' उनके उपन्यास 'इदन्नमम' पर आधारित है। मन्दाक्रान्ता का प्रथम संस्करण सन् 2006 ई0 में किताबघर प्रकाशन के द्वारा हुआ।

'इदन्नमम' की नायिका मंदाकिनी यहाँ आकर मन्दाक्रान्ता का चरित्र धारण कर लेती है। मंदा ही इस नाटक की नायिका है। पूरी कथा 'इदन्नमम' की ही है। अपने जीवन में मंदा उच्च आदर्शों को स्थान देती है। पिता महेन्द्र का जो गाँव में अस्पताल बनाने का सपना है, वह साकार करने में वह अपनी जिंदगी दाँव पर लगा देती हैं।

''श्यामली! एक आदर्श गाँव है। छोटे–बड़े, जात–पात का भेदभाव नहीं। आपस में स्नेह, प्रेम, भाईचारा से रहते थे। लेकिन आज श्यामली के लोग अपनी परछाईं तक पर विश्वास नहीं कर पाते। भाई–भाई के बीच रंजिश, घर–घर में क्लेश। जाने कैसे ग्रहण लग गया श्यामली की अच्छाई को। कुछ भी वैसा न रहा

सिवाय दादा के। बस, बदलते वक्त की आँधी में यही एक बरगद बच रहा है श्यामली में।''[49]

एकता प्रेम, भाईचारा, सदभाव, सामाजिक चेतना आदि के बारे में हम सिर्फ बोलते हैं पर सोनपुरा के लोगों ने इन शब्दों को अपनी दिनचर्या में उतार लिया। जब एक व्यक्ति अंतःचेतना से प्रेरित होकर उसे सहारात्मक रूप प्रदान करता है तब वह कार्य सिद्ध हो जाता है। मंदा एक ऐसी ही पात्र है जो महाराज द्वारा दिया गया मंत्र ओडम् भूर्भवः स्वः। अग्निऋषि पवमानः पांचजन्य पुरोहित। तमीमहे महागयं स्वाया। इदमम्नये पवमाय। इदंनमम् सं प्रभावित है और उसे जीवन में उतारती है। फलस्वरूप 'मकरंद' डॉक्टरी परीक्षा पास होकर आता है और मन्दाक्रान्ता का साथ देता है। गहरी संवेदना और भावनात्मक लगाव से लिखा गया यह नाटक समाज के लिए प्रेरणादायी सिद्ध हो रहा है।

डॉ0 दया दीक्षित ने मैत्रेयी जी के बारे में लिखा है– ''जिसमें फूलों–सा सौंदर्य, मनुसा ओज, सूर्य–सा तेज, चंद्र–सी शांत शीतलता, आकाश की विशालता, सागर–सी गहराई, जल–सी पारदर्शिता, वायु–सी पैठ, पृथ्वी–सी उदारता, सहिष्णुता, करुणा, भावप्रणवत्ता, मौलिकता, बहुज्ञता, सज्जनता, मित्रता, कलात्मक, निपुणता, लोकोन्मुखी वृत्ति, उद्यशीलता, संघर्षशीलता, ईमानदारी, प्रखर प्रतिभा, परोपकारी विवेकी जीवनदृष्टि, समानता, परदुख कातरता ... जैसे सद्वृत्तों गुणों का सम्मिश्रण हो उस आकृति का नाम है मैत्रेयी पुष्पा। हवा का रुख बदल देने वाली वीरांगना ये हैं मैत्रेयी पुष्पा।''[50]

1.7 काव्य सग्रह

लकीरें मैत्रेयी पुष्पा का एकमात्र काव्यसंग्रह है, जिसमें मैत्रेयी ने अंत भाव विश्व का वर्णन किया है। मैत्रेयी पुष्पा की कलम उनके गहन एवं गंभीर विचारों की परिवाहक रही है। ग्रामीण एवं महानगरीय जीवन की विसंगतियों एवं विषमताओं के परिप्रेक्ष्य में स्त्री विमर्श की विभिन्न छटाओं को प्रस्तुत करने में मैत्रेयी पुष्पा सफल सिद्ध हुई है। उनके साहित्य जगत विचार निकट भविष्य में निश्चित रूप से

---

49 डॉ0 शोभा यशवंते–मैत्रेयी पुष्पा के कथा साहित्य में नारी जीवन, विकास प्रकाशन, कानपुर, 2009, पृ0सं0 107

50 दीक्षित सूर्य प्रसाद– 'चाणक्य विचार', 2009, पृ0 38

सामाजिक क्रांति ला सकेंगे इसमें कोई दो राय नहीं।

मैत्रेयी पुष्पा के कथा साहित्य में लोक जीवन की तीखी गंध है। उनकी कहानियों में ग्रामीण अंचल साकार हो उठा है। 'चाक' उपन्यास मैत्रेयी पुष्पा का सर्वाधिक चर्चित उपन्यास है जिसमें लोक जीवन की भीनी–भीनी खुशबू है। सारंग नायिका है जो नारी जाति का प्रतिनिधित्व करती है। जो स्वतन्त्र जीवन जीना पसंद करती है। चन्दन की विदाई कै समय शकुन अपशकुन का यह उदाहरण लोक जीवन की मान्यताओं और लोक विश्वास को बताता है।

''अपनी मुट्ठी में दबाकर राई, नोन, लाल मिर्च ले आई, चलती बेला, लपेटकर बेटे की बराबरी में पहुंची, सात बार उतारा और पिछवाडे की मुट्ठी उछाल दी।''[51]

'चाक' उपन्यास में अन्धविश्वास का उदाहरण दृष्टव्य है।

''लो यह, मंगौ दादी ने सलामती का ताबीज दिया था। .... इसके गले में बांध आना। भूलना नहीं। यही साँस कहता है। इन गाँवों में लौक जीवन, लौक पर्व, लोक गीत, लोक आहें कराहें है नदी है, धूप है, अंचल में धूल है और सत असत है और हे रूलिक यत्र तत्र सर्वत्र मिलती है। 'बेतवा बहती रही' उपन्यास लोक जीवन का एक सुन्दर दस्तावेज है। बेतवा नदी के किनारे रहने वाले आदिवासी, भाग्यवादी दीन हीन कृषकों कै साथ होने वाले शोषण, उनका लोक जीवन, परम्परायें, रूूलिानट' उपन्यास में बुन्देलखण्ड धरोहर, वैभव संस्कृति, परम्पराएँ जनजातीय ग्रामीण विवश महिला की मनोदशा व वस्तु स्थिति की पुनरावृति वाला उपन्यास है। इस उपन्यास में लोक जीवन, आँचलिकता का पुट यत्र तत्र स्पष्ट परिलक्षित है। इस सन्दर्भ में राजेन्द्र यादव ने कहा है, ''झूलानट की शीलों हिन्दी उपन्यास के कुछ न भूले जाने वाले चरित्रौं में से एक है।''[52] 'कस्तूरी कुण्डल बसै', 'गुड़िया भीतर गुड़िया' मैत्रेयी पुष्पा के आत्मकथात्मक शैली में लिखित उपन्यास है। जिसमें लेखिका के जीवन संघर्ष की कहानी है। वह स्वयं कहती है, ''यही है हमारी कहानी। मेरी और मेरी माँ की कहानी।''[53] 'गुड़िया भीतर गुड़िया' में मैत्रेयी पुष्पा की ईमानदार, आत्म स्वीकृतियाँ है। जिसमें मैत्रेयी पुष्पा ने बुन्देलखण्ड

---

51 चाक : मैत्रेयी पुष्पा, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, पृ.सं. 63।

52 झूलानट : मैत्रेयी पुष्पा, (भूमिका में राजेन्द्र यादवप का वक्तव्य)।

53 कस्तूरी कुण्डल बसै : मैत्रेयी पुष्पा, भूमिका से।

के आस पास कै क्षेत्र कै लोक जीवन में व्रत, त्योहार, उत्सवों के महत्वों पर प्रकाश डाला है। वह लिखती है,

''चन्द्रमा व पवित्र जल के आपसी हेल मेल से बना यह करवा चौथ का त्योहार। स्त्रियां, जैसे सबकी दूल्हन। बड़ी बू 'गौमा हँसती है' सिर्फ एक कहानी नहीं, हिन्दी कथा जगत की एक घटना भी है।''[54]

मैत्रेयी पुष्पा अपनी कहन और कथन में अलग नहीं है। भाषा और मुहावरों में भी 'मिट्टी की गंध' समेटे है। इसका उत्कृष्ट उदाहरण है 'गोमा हँसती है'। इसमें दस कहानियां है। 'गोमा हँसती है' कहानी में अंधविश्वास का यह उदाहरण लोक जीवन की गंध को लिये हुए है। ''पाप संका! नरक होगा। सियाराम भगत के पास बहुत दिनों से गया नहीं। भूल गया पाप–पुण्य।''[55]

मैत्रेयी पुष्पा के कथा साहित्य में लोक जीवन के विविध आयाम स्थापित है। बुन्देलखण्ड और ब्रज प्रदेश की मिट्टी की सौंधी गंध है। भाषा और मुहावरे भी मिट्टी की गंध समेटे है। उनके सम्पूर्ण कथा साहित्य में लोक जीवन, लोक विश्वास, लोक अविश्वास, ज्योतिष, मूहुर्त तथा शकुन अपशकुन, लोक मान्यताएँ, लोक संस्कार, लोक मेले, उत्सव, त्योहार, लोक गीत, लोक कलाएँ, लोक रीति रिवाज, ग्रामीण आर्थिक संरचना, नारी संघर्ष, भाषा में आंचलिक मिठास व अनूठी नव्यता, स्थानीय राजनीति, नौटंकी, होली की रौनक और प्रतीक धर्मिता साकार हो उठी है। मैत्रेयी पुष्पा के कथा साहित्य में स्त्री विमर्श तथा लोक जीवन की भीनी–भीनी खुशबू है। सम्पूर्ण कथा साहित्य में समूचा उत्तर भारत बोल रहा है। मुहावरेदार जीवंत और खुरदरी लगने वाली भाषा की गवई ऊर्जा मैत्रेयी पुष्पा का ऐसा हथिया है जो हमें अपने समकालीन कथाकारों में सबसे विशिष्ट और अलग बनाती है।

1.6 रिपोर्ताज

फाइटर की डायरी

'फाइटर की डायरी' यहाँ आपने इस गाँव–गिराव की उन लड़कियों की संघर्ष कथा कही है, जो लड़की होने की सारी यातनाओं और प्रताड़नाओं को फलांगती हुई सिपाही और सब इंस्पेक्टर बनने तक आ पहुँची है।

---

54 गोमा हँसती है : मैत्रेयी पुष्पा, (राजेन्द्र यादव का वक्तव्य)।

55 गोमा हँसती है : मैत्रेयी पुष्पा, किताबघर प्रकाशन नई दिल्ली,1998 पृ.सं. 189।

इस सन्दर्भ में मैत्रेयी पुष्पा इस पुस्तक के आरंभ में लिखने से पहले शीर्षक अपने वक्तव्य में कहती हैं—इस पुस्तक के माध्यम से मैंने यह कहना चाहा है कि "लड़कियाँ पारिवारिक कटघरों को तोड़कर मुक्ति की तलाश में और ताकतवरी हासिल करने के लिए उस एरिया में हस्तक्षेप करती हैं जिसमें अभी तक उनके लिए सामाजिक मान्यता प्राप्त जगह नहीं थी। इस क्षेत्र में आने के बाद यह देखने का विषय हो जाता है कि क्या इन्हें वह ताकत मिल पाई जिससे ये अपने मुक्ति संघर्ष को आगे बढ़ा सके। यह भी कहना है कि मेरा 'गुनाह बेगुनाह' उपन्यास इन्हीं फाइटर्स के वृतान्त की अगली रचनात्मक कड़ी है।

"फाइटर की डायरी' किसी एक फर्म या विद्या में लिखी हुई किताब नहीं है। कहीं यह डायरी की शक्ल में है तो कहीं संवाद के रूप में, तो कहीं—कहीं कहानी का आभास देती हुई। "एक ही किताब का इस तरह कई—कइ फर्म में लिखा जाना कहीं न कहीं इस बात की तरह भी इशारा करता है कि स्त्री जीवन के इन टुकड़े—टुकड़े सत्य को सहेजना मैत्रेयी के लिए भी बहुत आसान न होकर एक जटिल और यंत्रणादायक प्रक्रिया रही होगी।"[56]

'संवेदी पुलिस—संवेदी समाज' का नारा देन वाली हरियाणा, पुलिस अकादमी में पुलिस प्रशिक्षण प्राप्त कर रही महिला पुलिसकर्मियों से संवाद के बाद उनके जीवन संघर्षों को जस का तस हमारे आगे रख देने वाली यह किताब कई स्तरों पर हमारी आँखें खोल देती हैं। कहा जाये तो मैत्रेयी की यह किताब स्त्री सशक्तिकरण का जीवंत उदाहरण है। त्रियाहठ को नये रूप में परिभाषित करने की पहल है, जहाँ दृढ़संकल्प हमारे जीवन को उन्नति की ओर ले जाए। डेमोक्रेसी का दस्तावेज है।

1.9. आलेख

मैत्रेयी पुष्पा एक सुधी लेखिका हैं। उन्होंने कथा साहित्य के साथ—साथ अनेक आलोचनात्मक निबंध समय—समय पर लिखे हैं, जो अनेक पत्र—पत्रिकाओं में जैसे हंस, इंडिया टूडे, नवभारत टाइम्स आदि में प्रकाशित होते रहे। कालांतर में उनके दो निबंध संग्रह प्रकाशित हुए। जिसके प्रकाशन में पितृसत्तात्मक व्यवस्था की

---

56 दीक्षित दया (संपा0)—मैत्रेयी पुष्पा : तथ्य और सत्य नई दिल्ली, 2013 पृ0सं0 257—58

जड़ें हिलने लगी। इन दोनों निबंध संग्रहों के केन्द्र में स्त्री तथा स्त्री से सम्बन्धित समस्याएँ स्त्री–शोषण, त्रासदी आदि को वाणी देते हुए लेखिका ने इन विषयों पर गंभीरतापूर्वक विचार प्रस्तुत किए हैं।

मैत्रेयी पुष्पा की स्त्री विमर्श संबंधी पुस्तकें –खुली खिड़कियाँ

मैत्रेयी पुष्पा का प्रथम आलोचनात्मक निबन्ध–संग्रह सन् 2003 में प्रकाशित हुआ। जिसे 'स्त्री–विमर्श' की सशक्त कड़ी माना जा सकता है। इस संपूर्ण संग्रह को लेखिका ने छः खंड़ों में विभाजित किया है–खंड–1 धर्म, खंड–2 संस्कृति, खंड–3 समाज, खंड–4 साहित्य, खंड–5 राजनीति और खंड–6 फिल्म और टेलीविजन। इस पुस्तक के आरम्भ में ही लेखिका ने अपना मत स्पष्ट किया है, ''मैं इतना ही कहना चाहती हूँ कि यहाँ जो लेख लिखे गये हैं वे सदियों पुराने चलन से लेकर आज तक के समय से जुड़ते हैं। यदि कह दूँ कि इनका विषयवस्तु हजारों सालों में फैला हुआ है तो अतियुक्ति न होगी।''[57]

इस पुस्तक को लेकर किया जाने वाला विरोध की स्थिति को भांपकर लिखती है ''यदि मैं और मेरी जैसी स्त्रियाँ धार्मिक और सामाजिक पक्ष को चुनौती देती हैं, तो हमारा यह कृत्य समाज–विरोधी, धर्म–विरोधी और कुछ मिलाकर परम्परा–विरोधी ठहराया जाता है। स्त्री द्वारा चाहे जाने वाली समानता जिसे वह अपनी स्वतंत्रता भी कह सकता है। सिरे से आयायित उच्छृंखलता से जोड़ दी जाती है।''[58] इस संकलन का केन्द्रिय सवाल है, स्त्री होने के कारण स्त्री का दैहिक व मानसिक शोषण हो रहा है उससे वह कैसे मुक्त हो? भारतीय परिप्रेक्ष्य में मुक्ति के इस विचार को व्यवहारिक रूप देने में मैत्रेयी सबसे बड़ी रूकावट धर्म को मानती है।

मैत्रेयी के मतानुसार, ''भारत में धर्म सहिष्णु आधार पर नहीं उग्र ताकतों के इशारों पर डराने व धमकाने का काम करता है। यह वजह है कि 21वीं सदी में पहुँचकर भी स्त्री दोयम दर्जे का स्थान रखती है। शूद्रों से भी शूद्रों जीवन व्यतीत करती है क्योंकि ''शूद्र का धर्म उसके वर्ण, जाति व व्यवसाय के आधार पर तय

---

57 मैत्रेयी पुष्पा –खुली खिड़कियाँ, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003, पृ0सं0 6

58 मैत्रेयी पुष्पा –खुली खिड़कियाँ, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003, पृ0सं0 11

होता है, परन्तु स्त्री का आधार शुद्ध लैंगिक है।''[59]

लैगिक विभेद के कारण उसका दैहिक शोषण हर क्षेत्र में रहा है। ''स्त्री होने के कारण ही वह मरदों के हमले झेलती है.... उसकी लूट स्वादिष्ट मिठाई की लूट होती है जिसे कोई जब चाहे खा.....लें......वह घर में रहे या कोठे पर पुरुष के लिए सुधार साधन का ही रूप है।''[60]

मैत्रेयी स्त्री शोषण का सबसे बड़ा कारण पितृसत्ता व्यवस्था को मानती है। ''बिंदी चूड़ी, मंगलसूत्र लुभाते ही नहीं, कहीं सुरक्षा का अहसास भी देते हैं। मालिक रहेगा तो जिंदगी भी रहेगी ऐसा सोचने वाली की सुहाग पिटारी सर्प की आकर्षक आँखों की तरह आकर्षित करती है। वही मौका देखकर डस लेती है।''[61] मैत्रेयी के अनुसार सारे संस्कृति में मैत्रेयी पुष्पा लिखती हैं, ''समाज तो बस इतना जान पाया कि स्त्रियों के पास पुरुष को मौत के मुँह से खींच लाने का तेज है। वह मुगालता नहीं क्योंकि हम बेशक शेष हो गए, मगर रहे सौभाग्यवती ही।''[62]

साहित्य का महत्व स्पष्ट करते हुए मैत्रेयी कहती हैं ''यही है कि जिसने खुद को पहचाना है, उसने अपने आपको किसी रचना के आइने में जरूर देखा है। भले वह रचना लोककथा की हो, या लोकगीत हो, गीत कथा हो अनुभव जन्म विचारों की श्रृंखला। उसी में से कोई ऐसा रेशा, ऐसा तत्व, ऐसी भावना मन को कुरेदती है कि राख हट जाता है, आग उभर आती है और इस लपट में स्त्री अपने परिवेश से छिटककर तमक से सिर उठाए आती है।''[63] साहित्य के द्वारा स्त्री को नई दिशा प्राप्त होती है।

केवल पुरुष वर्चस्व, समाज एवं संस्कृति ही नहीं बल्कि राजनीति तथा मासमीडिया और साहित्य में भी हावी है। मैत्रेयी इसे देखते हुए कहती हैं, ''स्त्री सशक्तिकरण के वर्ष में स्त्री के सिर पर सिंदूर के बोरे लादे व गले में सुहाग की

---

59 मैत्रेयी पुष्पा –खुली खिड़कियाँ, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003, पृ0सं0 46

60 मैत्रेयी पुष्पा –खुली खिड़कियाँ, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003, पृ0सं0 72

61 मैत्रेयी पुष्पा –खुली खिड़कियाँ, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003, पृ0सं0 87

62 मैत्रेयी पुष्पा –खुली खिड़कियाँ, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003, पृ0सं0 123

63 राजेन्द्र यादव (सं0) –हंस, अप्रैल 2004, पृ0सं0 93

सांकल बंधे दृश्य।''[64]

मैत्रेयी के इस संग्रह के सन्दर्भ में बलवंत कौर लिखते हैं, ''मैत्रेयी की कोशिश यही बताने की है कि स्त्रियों को धर्मशास्त्र, समाज–संस्कृति, पुरुष की निरंकुशता आदि के चौखट को तोड़ अपने मानवीय होने की जद्दोजेहद को स्वयं पूरा करना होगा।''[65]

मैत्रेयी की इस पुस्तक में चित्रित स्त्री किसी वर्ग विशेष या समुदाय की स्त्री नहीं, बल्कि वह शुद्ध भारतीय स्त्री है जो हर वर्ग और समुदाय में विद्यमान है।

सुनो मालिक सुनो

मैत्रेयी पुष्पा का दूसरा लेख संग्रह सन् 2006 ई0 में प्रकाशित हुआ। स्त्री विमर्श को नई दिशा और तेवर देने वाली उपन्यासकार के रूप में चर्चित रही मैत्रेयी पुष्पा की स्त्री विमर्श को लेकर दो मूल मान्यताएँ रही हैं–उसकी दैहिक स्वतंत्रता और राजनीति में सक्रिय भागीदारी।

'सुनो मालिक सुनो' निबंध संग्रह आपकी आक्रामक मुद्रा का प्रत्यक्ष प्रमाण है, जहां ''खुली खिड़कियां'' के बाद अपने सवालों, संस्कारों और संवेदना को उन्होंने बेलाग भाव से व्यक्त किया है। जाहिर है यह पुस्तक मालिक (पुरुष) की। चिरौरी करती कनीज (स्त्री) की करुण पुकार नहीं, मालिक पर नालिश ठोंकती हुंकार है, जिसे अनसुना करना लोकतंत्र और मनुष्यता दोनों का अपमान करना है।

यह पुस्तक दो खंडों में विभक्त है। पहला खण्ड स्त्री से जुड़े आधारभूत सवालों पर केन्द्रित है। कन्या, परिणीता, योनिमात्र, दामन में दाग, जनतंत्रं प्रथम भाग के अंतर्गत लिखे गए लेख हैं। दूसरे भाग का उन्होंने नामकरण किया है–'स्त्री मेरे पाठ में', इस भाग में है–आपकी धनिया बाड़े लाँघती स्त्रियाँ, औरत और फुटबाल, अनुपस्थित भाषा के पात्र, अंधकार और रोशनी (आलो आधारित) कुलीन विसंगतियाँ, जीवन पलट कर तो देखा, द्विखण्डित जीवन के बावजूद आधी आबादी। मुबारक आजादी, मैं चिशलोखा हूँ ऐसा क्या कर डाला? मुक्ति की दावेदारी आदि लेखों का समावेश है।

'कन्या' लेख के अंतर्गत उन्होंने मुख्य रूप से विवाह और दहेज की समस्या

---

64 मैत्रेयी पुष्पा–सुनो मालिक सुनो, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2006, पृ0सं0 13

65 मैत्रेयी पुष्पा–सुनो मालिक सुनो, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2006, पृ0सं0 14

को रेखांकित किया है। 'परिणीता' लेख में वह स्त्री के लिए विवाह आवश्यक क्यों माना जाता है? इस मुद्दे पर अपने विचार स्पष्ट करती हुई कहती हैं कि 'स्त्री का विवाहित होना, उसकी जिंदगी का चरम लक्ष्य है और अविवाहित रहना भविष्यहीन जीवन की खाई में गिर जाना है।'

इस तरह हर लेख के माध्यम से क्रांतिकारी विचार प्रस्तुत किए हैं जो स्त्री विमर्श को नया आयाम देते हैं। इन निबंधों में मैत्रेयी ने स्त्री की सत्ता, अस्मिता और व्यक्तित्व को 'देह' मात्र में रिडयूस कर डालने वाले संबंधों–व्यक्तियों और व्यवस्थागत षड्यंत्रों का खुलासा किया।

'स्त्री मेरे पाठ में' चर्चित–अचर्चित हिन्दी–हिन्दीतर कथाकारों द्वारा रची गई कथाकृति पर मैत्रेयी पुष्पा की समीक्षात्मक टिप्पणियों का संकलन है। इनमें विशेष उल्लेखनीय है धनिया (गोदान), चित्रलेखा (चिशलोखा) और लीडिया एविलोब (चेखन की प्रेमिका) को लिखे गए पत्र। यहाँ लेखिका ने स्थितियों घटनाओं, पात्रों का विश्लेषण करते हुए जिस कुशलता से प्रेमचंद और भगवतीचरण वर्मा की स्त्री विरोधी दृष्टि को उभारा है वह निश्चय ही सराहनीय है।

मैत्रेयी उन तमाम साहित्यकारों पर करारी चोट करती है जिन्होंने एकांगी लेखन किया है। गोदान की धनिया को लेखिका ने नए सिरे से प्रस्तुत किया है। धनिया के माध्यम से मैत्रेयी विरोध करती हैं सामाजिक तथाकथित मानदंडों का जो इस रूप में है–''हाँ, जो औरत पर और घूँघट के भीतर से अपनी आवाज अपने पति के लिए बुलंद कर दे, वह हिम्मत दिलेर और हौसलेवाली मानी जाती हैं। अगर मैं ही कह देती कि स्वार्थी जमींदारों और साहूकारों के मुकाबले हमारे मर्द किसी दर्जे से कम नहीं क्योंकि ये हमें बैल की तरह काम में जोतते हैं। मना करने पर पीटते हैं, दो रोटी और फटे कपड़ों की एवज, हमारी जिन्दगी रेहन रख लेते हैं। तो आप मुझे कौन–सा खिताब नवाजते? मैं पति–विरोधिनी के दायरे में आ जाती और आपकी करूणा के लिए तरसती। अगर मैं कहती कि मैं होरी के दब्बूपन, स्वार्थ और जड़ता से अजिज आ गई हूँ। तो मैं कुल्टा हो जाने का इलजाम पाती।''[66]

इस तरह मैत्रेयी ने अपने पूर्ववर्ती रचनाकारों के उन मुद्दों को खारिज किया

---

66 मैत्रेयी पुष्पा–सुनो मालिक सुनो, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2006, पृ0सं0 169

जो स्त्री के विकास के लिए बाधक थे।

चर्चा हमारा

मैत्रेयी पुष्पा का 'चर्चा हमारा' स्त्री–विमर्श संबंधी पुस्तक का प्रथम संस्करण सन् 2009 ई0 में सामयिक प्रकाशन द्वारा हुआ। यह पुस्तक मैत्रेयी पुष्पा द्वारा विभिन्न मौकों पर दी हुई टिप्पणियों, साक्षात्कार अलग–अलग पन्नों पर इखरी–बिखरी बातों का लेखिका प्रतिभा कटियार द्वारा तरतीब और तरकीब से संजोकर पेश की गई प्रस्तुति है। मैत्रेयी पुष्पा पुस्तक के आरम्भ में ही औरत ही औरत का विस्तार है

मैत्रेयी पुष्पा उपरोक्त शीर्षक लेख में कहती है कि पुरुष वर्चस्ववादी समाज में आज भी नारी की स्थिति कमजोर है। आज भी स्त्री चेतना सम्पन्न होने के बावजूद भी सामाजिक तौर पर निरीह बनी हुई है। इसका कारण है कि स्त्री को लेकर कहीं नैतिकता जवाब तलब करती है तो कहीं शुचिता इल्जाम देती है, पवित्रता के क्षरण का अभियोग सिर चढ़कर बोलता है। विवाह–वर्चस्व कदम–कदम पर हावी है।

घरेलू हिंसा अपनी हकदारी जमाती हुई सामाजिक सम्मान के साथ मिली भगत की तरह जुड़ी है। ''औरत की बेबाक कलम का चलना, सिर पर कफन बांधकर निकलने जैसी बात है'' शीर्षक लेख में वह कहती हैं कि स्त्री की सच्चाई से पुरुष वर्चस्व डरता है। मैत्रेयी मानती है कि स्त्री देह इस दुनिया की सबसे बड़ी समस्या है। उसकी सारी समस्याएँ उसकी देह को लेकर शुरू हुई हैं। उसके जन्म के साथ ही घरों में उदासी का आलम छाने लगता है।

'नैतिकता की भूमि परिस्थितियाँ होती हैं' नामक लेख में लेखिका कहती हैं कि–''यह नैतिकता नामक शब्द इतना बड़ा है कि इसने हमारी सारी जिंदगी को घेर रखा है। ये जो नैतिकताएँ हैं, इनका अस्तित्व सिर्फ स्त्री के लिए ही क्यों है? नैतिकताओं को अब नए सिरे से गढ़ना होगा। हर स्त्री को एक बार फिर से इसे समझना होगा कि ये नैतिकताएँ कितनी वाजिब हैं।''[67] आगे वे कहती हैं कि स्त्री धर्म की सच्ची परिभाषा स्त्री ही देगी। वे कहती हैं कि रचनाओं में इतनी ही निर्भीकता चाहिए जितनी कि निधि शुक्ला (मधुमिता की बहन) में देखी गई।

67 मैत्रेयी पुष्पा–चर्चा हमारा, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, पृ0सं0 169

इस संग्रह में जहाँ एक ओर स्त्री लेखन की चुनौतियों पर गंभीर चिंतन है वहीं सामंती पुरुष पक्ष की उड़ती धज्जियाँ भी नजर आएगी। बाजार होती औरतों के विरोध में ही नहीं, स्त्री–सोच से संस्कारों के खोखलेपन को उजागर करने में भी मैत्रेयी जी की कलम सन्नध रही हैं।

यहाँ विचारों का आधार सतर्क निर्भीकता है। उसमें सड़ी–गली और मनुष्य विरोधी मान्यताओं का सीधा विरोध तो है ही, नए और खुले विचार का स्वागत भी है।

तब्दील निगाहें

स्त्री विमर्श संबंधी यह पुस्तक किताबघर प्रकाशन द्वारा सन् 2012 ई0 में प्रथम बार संस्करण रूप में आई।

'तब्दील निगाहें' मैत्रेयी पुष्पा की स्त्री के प्रति न्यायपूर्ण स्वीकृतियों व उसकी संवेदनाओं का वह दस्तावेज है जो स्त्री के आंतरिक विस्फोट की कथा कहता है और उसके सामाजिक पहलुओं को चेतावनी देता हुआ चलता है।

''मैत्रेयी ने साहित्य के उन तमाम पुरोधाओं को चेतावनी देते हुए स्त्री चरित्र की संरचना में की जाने वाली भूलों व उनके पारंपरिक सामाजिक नजरिये को स्त्री के प्रति अन्यायपूर्ण माना है और उसे अपनी चेतना से नवाजकर एक मुकम्मिल स्त्री की उस भूमिका से लैस किया है जो हर हाल में खुद को मनुष्य मान लिए जाने के प्रति प्रतिबद्ध है।''[68]

सच को पूरे साहस से कहने वाली रचनाकारों में सम्मिलित मैत्रेयी पुष्पा उसने कहा था, ''गोदान, चित्रलोखा, ध्रुवस्वामिनी, त्यागपत्र, मैला आंचल और रागदरबारी जैसी अपने समय की कालजयी रचनाओं को बिल्कुल अलग निगाह से देखती और उसके स्त्री पात्रों के मन में सोए पड़े सवालों को उघाड़कर उन्होंने एक नई बहस को आधार प्रदान किया है। ''इन कृतियों के संदर्भ में लेखिका द्वारा उठाए गए सवाल न केवल पढ़ने वाले को बेचैन कर सकते हैं बल्कि इन्हें नए तरह से 'तब्दील निगाहों' के जरिए पुनर्मूल्यांकित करने की मांग भी करते हैं।''[69]

मैत्रेयी में गजब का साहस है जो परंपरागत आतंक के विरूद्ध चुनौती बनकर

---

68 भारद्वाज प्रेम (संपा0)–'पाखी' पत्रिका अक्टूबर–नवम्बर 2012, पृ0सं0 77

69 पुष्पा मैत्रेयी –तब्दील निगाहें, आवरण पृष्ठ, किताबघर प्रकाशन, 2006 पृ0सं0 91

खड़ा हो जाता है। उनके पास स्त्री मन के तमाम चीन्हे–अनचीन्हे बिम्बों के पहचानने वाली अचरजकारी दृष्टि है। यही वजह है कि इस किताब के जरिए जब वह प्रसिद्ध कृतियों के स्त्री पात्रों में परकाया प्रवेश करती है, तो कई ऐसे सवाल सामने ला खड़ी करती है जिनके बारे में संभवतः उन पात्रों के जन्मदाता लेखकों ने भी नहीं सोचा होगा। मिसाल के तौर पर 'उसने कहा था' कहानी की सुबेदारनी को गुलेरी जी ने एक ऐसे पारंपरिक स्त्री पात्र के रूप में रचा था जो पति और बच्चे की रक्षा के लिए प्रेमी के प्राणों का बलिदान माँगती है। लेकिन सवाल उठता है कि अगर सुबेदार का चरित्र स्वतंत्र स्त्री का होता तो भी क्या वह उसी तरह सोचती? यही वह बिन्दु है जहाँ पर रूककर मैत्रेयी जी ने गहनता से विचार किया और एक स्त्री के मन में मौजूद चाहत से उपजने वाले सवालों को लेखक के सामने रखा है।

मैत्रेयी पुष्पा के भीतर की आलोचकीय दृष्टि भी साधनरूप से प्रकट हुई है। बनी–बनाई धारणाएं और अपनी कूपमंडूकता में आनंदित रहने वाले आलोचकों के लिए यह पुस्तक एक सबक की तरह हो सकती है।

आवाज

विगत बीस–पच्चीस वर्षों से हिन्दी कथा साहित्य की प्रतिष्ठित लेखिका होने के साथ ही मैत्रेयी पुष्पा लगातार बहुचर्चित भी रही। कथा के दायरे से बाहर मैत्रेयी पुष्पा का सजग चिंतक रूप हिन्दी की महाश्वेता देवी का है। वह स्त्री विषयक चिंतन में वायवीय भाषा के संजाल में नुँसकर अपनी सहज संप्रेषणीय जबान में ऐसे बात करती हैं कि आम स्त्रियाँ भी यह पहचान सकें कि उनके बारे में किया जा रहा चिंतन क्या है? वे उससे न सिर्फ विचार समृद्ध होती हैं बल्कि, स्वयं भी उस महायुद्ध में सहभागी हो जाती हैं जो उनके विरूद्ध लड़ा जा रहा है।

अनेक क्षेत्रों की तरह राजनीति में स्त्री की स्थिति का आकलन हो या साहित्य में संवाद करने वाली रचनाकार का परिवार में माँ की हैसियत हो या स्त्री शिक्षा की जरूरत, सामाजिक अनुकूलन के विरूद्ध आवाज उठानी हो या महिलाओं के लिए महिला पुलिस व्यवस्था की समीक्षा, मैत्रेयी जी महाप्रश्न करती हैं कि स्त्री का समय कब बदलेगा? वह स्त्री को एक पूर्ण इकाई के रूप में परिभाषित करती हैं।

मैत्रेयी कहती हैं कि मनुस्मृति का 'रूल' इक्कीसवीं शताब्दी में भी चल रहा

है। जहाँ बदचलन करार दी गई औरत की हत्या आज भील मनुस्मृति में बताए नियमों के तहत जायज मानी जाती है। लेकिन अब इतिहास पलटने की बारी है अब संस्कारों की कठोर बेड़ियों को तोड़ने का समय आ गया है। अब संशोधन की बड़ी जरूरत है। कारण कि जब भी स्त्री की अपनी प्रवृत्ति घुटी, दबी या अवरूद्ध रहेगी तो वह दिशाहीनता की शिकार ही होगी। स्थितियाँ और भी घातक और मारक होकर सामने आएँगी।

स्त्रियाँ आज भी अज्ञान के अंधकार में मर्यादा और इज्जत के नाम पर मर मिटती रहती हैं, उनकी चेतना सुप्त पड़ी रहती है। मैत्रेयी प्रश्न करती हैं कि क्या चेतना करवट लेती है? कभी गांधारी ने अपनी आँखों की पट्टी खोली होगी? सीता ने अग्निपरीक्षा से इंकार किया होगा?

शांडिलिनी ने 'सतीपद' से गुरेज किया होगा? जिस तरह इन तीनों देवियों ने खुद को धर्म के नाम पर स्थगित किया वैसे ही आज भी स्त्री मर्यादा, शील के घूँघट में चुप्पी साधे बैठी है, लेकिन जरूरत है स्त्री को उठकर समाज में अपने अधिकार के प्रति जागरूक होकर अपने हक के लिए आवाज उठाने की। तभी मैत्रेयी एक स्त्री के रूप में अपने अधिकार के प्रति जागरूक होकर अपने हक के लिए आवाज उठाने की। तभी मैत्रेयी एक स्त्री के रूप में सम्पूर्ण स्त्री वर्ग से यही चाहती हैं कि वह कहे–"मैं गूँगी होकर उनके संस्कारों को नहीं सहूँगी मेरे दिमाग को, मेरे दिल को, मेरी आँखों को, मेरी जुबान को कोई शक्ति रोक नहीं सकती।"[70]

1.10. टेलीफिल्म

समाज की क्रूर सच्चाई यह है कि औरत का परदे पर दिखाया जीवन आदर्श और संघर्ष से युक्त रहता है लेकिन वास्तविक जीवन कुछ और है। स्त्री को जीवन भर पुरूषों के सम्मान के लिए जीना पड़ता है। जो सिर झुकाकर जीती है उसे जीने दिया जाता है नहीं तो बेदखल किया जाता है। ससुराल की किसी चीज पर उसका कोई अधिकार नहीं रहता। मैत्रेयी पुष्पा कहती हैं– स्त्री ने बौद्धिक क्षमता से तिलस्मी दुनिया के लोगों का पहचान कर निर्माता के भेष में बैठे हिंसक भेड़िए

---

70 मैत्रेयी पुष्पा–'आवाज', सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2014, पृ0सं0 95

से अपना संरक्षण करना चाहिए, पर स्त्री बंधनों से मुक्त न होकर विज्ञापनों के कर्ता–धर्ता के हाथ की कठपुतली बन जाती है।

डॉ0 रंजना जायसवाल ने लिखा है–''मैत्रेयी जी मुकुटवाली सुंदरियों की भी खूब खबर लेती है। क्योंकि उन्होंने सौन्दर्य प्रतियोगिता के ज्यूरी के सामने दबे–कुचले लोगों, अपंग और अविकसित दिमाग वाले बच्चों और अन्याय से जूझती–हारती और मरती स्त्रियों के प्रति हमदर्दी जताई थी। खुद को समाज सेविका के रूप में प्रस्तुत किया पर ताज पहनते ही साबुन, डिटर्जेंट और तौलियों के विज्ञापन देने लगीं। टूथपेस्ट और क्रीम से लेकर फ्रिज और एयर कंडीशनर बेचती सुंदरियाँ–विश्वसुंदरियाँ भला अपनी एनर्जी उन लोगों पर क्यों खर्च करें जो कीड़े–मकोड़ों की तरह मनुष्य रूप में बिलबिला रहे हैं।''[71] नई सदी में सुंदरियों, विश्वसुंदरियों की भीड़ होती रही तो सच्ची समाज सेविकाओं को अपने काम में सफलता नहीं मिलेगी। इसलिए मैत्रेयी जी उन्हें धिक्कारती हैं–''ओ सुंदर–तन, सुंदन–मन स्त्री, तुम झूठी हो। इतनी झूठी, जितनी कि तुम ज्यादा से ज्यादा हो सकती हो।''[72]

आजादी के बाद स्त्री समानाधिकार पाने के लिए प्रेरित हुई तो दूरदर्शन धारावाहिकों ने स्त्री विरोधी जाल बुनकर सास–बहू का ऐसा चक्र चलाया कि स्त्री का आजादी का नशा उसमें ही खो गया। धारावाहिकों में स्त्री को बराबरी का दर्जा नहीं मिला। इसी कारण सह नागरिक होने का दावा करती स्त्री का आज तक सारा श्रम व्यर्थ है। सैकड़ों वर्षों से नारी पर हो रही मानसिक यातना का अंत नहीं।

राजस्थान में भंवरीबाई बलात्कार कांड पर जगमोहन मुंदडा की फिल्म 'बवंडर' में कोर्ट में कितनी गंदी, अश्लील और अपमान जनक बहसें सुननी पड़ी। पुरूष की बलात्कारी भूमिका से सारा समाज अवगत है। इस निर्घृण कृत्य को वह अपना अधिकार मानता है। स्त्रियों के साथ आज बलात्कार के मामले बढ़ रहे हैं। इसका कारण स्त्रियों को डरा–धमकाकर चारदीवारी में कैद रखना है। ताकि वह अपनी आजादी का उपयोग न कर सकें। एक तरह से स्त्रियों के खिलाफ यह साजिश है। अपहरण, बलात्कार, हत्या के मामलों में स्त्री को इंसाफ नहीं मिलता।

---

71 दीक्षित सूर्य प्रसाद– 'चाणक्य विचार', मई 2009, पृ0 52

72 मैत्रेयी पुष्पा– 'खुली खिड़कियाँ', सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003 पृ0 244

मैत्रेयी साफ कहती हैं—"पुरूषों की सनद के झंडे बुलंद हैं, उनकी हवस का दायरा बढ़ता जा रहा हैं तो इसमें इंसाफ भी कोई क्या करेगा? इंसाफ करने वाले तो पुरूष ही हैं। यह व्यवस्था पुरूषों की, पुरूषों के द्वारा पुरूषों के लिए है। वे स्त्री जैसे जीव का कैसा भी इस्तेमाल कर सकते हैं?"[73] बलात्कार जैसे हिंसक अपराध पर उसका कोई (हाईकोर्ट, सुप्रीमकोर्ट) कुछ नहीं बिगाड़ पाता। जो एक तरह से दोषियों के अपराध को बढ़ावा देते हैं। भंवरी की हिम्मत को पाप समझकर उसे मार डालने की कोशिश करेंगे और यदि बची तो लाँछन लगवाकर जीना हराम करके आत्महत्या के लिए मजबूर करेंगे।

निष्कर्ष

हिन्दी कथा साहित्य में लेखन कर रही दो दर्जन से अधिक चर्चित महिला कथाकारों में मैत्रेयी पुष्पा एक विलक्षण व्यक्तित्त्व कही जा सकती हैं। जब भी हम किसी साहित्यकार अथवा कथाकार के जीवन और साहित्य का अध्ययन—मूल्यांकन करते हैं तब उसके जीवन से जुड़े अनुभवों, अनुभूतियों तथा व्यावहारिक स्थितियों को उसकी कृतियों में खोजते हैं। यह सत्य है कि साहित्यकार अपनी कृतियों में अपने परिवेश और परिस्थितियों के बीच प्राप्त अनुभूतियों को अभिव्यक्त करता है। परिवेश और परिस्थितियों के परिवर्तन का उसकी अभिव्यक्ति पर प्रभाव पड़ता है और जागरूक साहित्यकार इनसे तालमेल बिठा लेता है। इस प्रकार की शक्ति, सामर्थ्य और योग्यता जिस साहित्यकार में होती है, सफलता उसके चरण चूमती है।

समकालीन कथा लेखिकाओं में मैत्रेयीपुष्पा का विशिष्ट स्थान है। इन्होंने हिन्दी साहित्य अनेक विधाओं में अपनी लेखन प्रतिभा का लोहा मनवाया है। मैत्रेयीपुष्पा भारत की ऐसी महिला है जिन्होंने अपनी कहानियों में हर कोण से गाँव की स्त्रियों की कहानी लिखी है। इन्होंने ग्रामीण स्त्रियों एवं ग्रामीण समाज की समस्या को प्रमुखता से उठायीं है।

स्वतंत्रता प्राप्त के पश्चात भारतीय जन—मानस में एक खुशी की लहर हिलोर ले रही थी कि अब उनकी सरकार होगी, अपना कानून होगा, चारों तरफ समता के मूल्यों का विकास होगा हम स्वतंत्र हो गये यह भारतीय जनता के लिए एक स्वप्न

---

73 मैत्रेयी पुष्पा— 'खुली खिड़कियाँ सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003 पृ0 130

मात्र था। आजाद भारत में अपनी सरकार, अपने नेता और सरकारी कर्मचारी आम जनता के शोषण में जी जान से लग गये। भारतीय गरीब मजदूर तथा छोटे–छोटे किसान बड़ी तीव्रता से मजदूर में तब्दील हो गये। शिक्षा, स्वास्थ्य व अपने अधिकार से लोग वंचित थे शोषक वर्ग के नये–नये रूप गाँव में कैसे उभरते है इसका ज्ञान मैत्रेयीपुष्पा के कथा साहित्य को पढ़ने के पश्चात होता है।